चन्दामामा
जनवरी १९७६
1

Photo by: S. G. SESHAGIRY

ARRIVING

राम और श्याम को मिला— अलाउद्दीन का चिराग

राम और श्याम गये चोर बजार
वहां चीजें देखीं कई हजार

पुराना एक चिराग दिखाई दिया
उन्होंने उसे खरीद लिया

चिराग घिसकर ज्यों चिल्लाये, आ धुएं के बादल मंडराये

"मांगो मुझसे जो चाहो, तुम छोटे सरकार
तुरंत लगा दूंगा मैं, सब चीज़ों की भरमार"

"ना हम चाहें सोना चांदी, ना हम चाहें रॉकेट, मंगा दो हमें दो-चार पॉपिन्स पैकेट"

तो ये लो पॉपिन्स पैकेट, जितने चाहो ले जाओ, हंसी-खुशी से इनको तुम खाओ और खिलाओ.

रसीली प्यारी मज़ेदार

फलों के स्वादवाली गोलियां

५ फलों के स्वाद—
रासबेरी, अनानास,
नींबू, नारंगी व मोसंबी.

everest/220/PP-hn

हमें तो
प्यारा लगता है
चन्दामामा
चन्दामामा
आप को भी प्यारा लगेगा
चन्दामामा को हरेक पुरुष, हरेक स्त्री और हरेक बच्चा
पढ़ता है । अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी, तेलुगु, कन्नड़, तमिल, गुजराती,
मलयालम, बंगला, उड़िया और पंजाबी इन ग्यारह भाषाओं में
प्रकाशित बच्चों के इस मासिक पत्र में अत्यंत
रोचक और आश्चर्य भरी कहानियाँ रहती हैं
जो हर दिल में एक उत्साह, एक उमंग भर देती है ।
चन्दामामा बालकों का अपना मासिक पत्र जिससे बड़े बनते
नौजवान और नौजवान बनते बड़ों जैसे बुद्धिमान

मैं गंदे पैरों से भला प्लूटो को अन्दर कैसे लाता?
HT-HSI 8124 R
अन्तर्राष्ट्रीय गुणमान के अनुरूप निर्मित सैनेटरीवेयर और वॉल टाइल्स
VITREOUS
हिन्दुस्तान सैनेटरीवेयर एण्ड इण्डस्ट्रीज़ लिमिटेड
२ वेलेसली प्लेस, कलकत्ता ७०००01
सोमानी-पिलकिंगटन्स लिमिटेड
कसार, रोहतक, हरियाना

ये लीजिये
आपको लुभानेवाले
क्रॅकीज़
सांता क्लॉस की ही तरह एन. पी. भी बच्चोंके लिए स्वादिष्ट मिठाइयोंका खज़ाना लुटाने लाते हैं। एन. पी. क्रॅकीज़ च्युइंग गम—बबल गम भी—जो पेपरमिंट, पाइनएपल, टूटी फ्रूटी, ऑरेंज और अनोखे, सुपारीके स्वादयुक्त होते हैं।
इसके अलावा बॉनबाइट—जो मलाईदार और अप्रतिम स्वादिष्ट मिठाई है; और फलोंके रुचिकर स्वादवाले बालगम्स।
आपकी रुचि-पसंद च्युइंग गम
NP
CRACKIES
bonbite
NP — ISI गुणवत्ता के निशानवाले अद्वितीय च्युइंग गम्स और बबल गम्स।
अपनी जेबोंमें हमेशा NP – आपकी पसंद की च्युइंग गम्स रखिए।
दि नॅशनल प्रॉडक्टस
बंगलूर
Dattaram-NP-1 HINDI

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस अंक के साथ 'विचित्र जुड़वाँ' नामक रंगीन चित्रवाली धारावाही कथा समाप्त हो रही है। अगले अंक से नयी धारावाही शुरू होगी। इस महीने की बेताल कथा "अव्वल दर्जे का स्वार्थी" है। इससे हमें यह विदित होता है कि परिस्थितियों के अनुकूल होने पर अच्छा व्यवहार करने में कोई महत्व की बात नहीं है, परंतु अपने उत्तम व्यवहार को बनाये रखने के लिए कठिनाइयों का सामना करने में ही महानता है।

वर्ष : २८ जनवरी १९७६ अंक : ७

मित्र-भेद

[३०]

करटक ने दमनक को तोतों की कहानी सुनाकर कहा–"तुम अपनी करनी का यों कहकर समर्थन कर सकते हो कि तुम ने यह सारा काम अपने मित्र सिंह के वास्ते किया है! लेकिन मुझे एक बात कहने दो– 'मूर्ख मित्र की अपेक्षा विवेकशील शत्रु सदा अच्छा होता है! इस के उदाहरण स्वरूप एक डाकू ने अपने प्रत्यर्थियों के पीछे जान गंवाई है। एक बंदर ने अपने एक मित्र राजा का वध किया है।"

"यह कैसे हुआ!" दमनक ने पूछा।

करटक ने वह कहानी यों सुनाई :

प्राचीन काल में कौशाम्बी में एक राजकुमार था। वह सदा ब्राह्मण मंत्री के पुत्र तथा वैश्य कोशाध्यक्ष के पुत्र के साथ अपमा समय बिताया करता था। वे आप्म मित्र बनकर हमेशा मनोरंजन, खेल, देशाटन तथा वार्तालाप के द्वारा अपना समय बिताया करते थे।

उनकी संगति के कारण राजकुमार अस्त्र-शस्त्रों की विद्या, तलवार व भाले चलाना अश्वारोहण, गजारोहण इत्यादि अन्य क्षत्रियोचित्त विद्याओं में प्रवीण नहीं बन सका।

एक दिन राजा ने अपने पुत्र से पूछा– "तुम ने क्षत्रियोचित विद्याएँ नहीं सीखीं, राज्य का भार कैसे संभाल लोगे?"

अपने पिता के मुँह से यह बात सुनकर राजकुमार बड़ा दुखी हुआ और उसने यह बात अपने मित्रों से कह दी।

इस पर राजकुमार के मित्रों ने उत्तर दिया–"हमारे पिता भी सदा हमारी आलोचना कुछ इसी प्रकार करते हैं। वे कहते हैं कि हम अपने वंश की विद्याएँ न

अंतिम पृष्ठ का चित्र

प्राप्त कर बिगड़ते जा रहे हैं। अब तुम्हारा भी अपमान होते देख हमें भी दुख हो रहा है।"

राजकुमार ने अपने मित्रों को समझाया– "जहाँ पर अपमान होता है, वहाँ हमें नहीं रहना चाहिए। हम तीनों अपने पिताओं से अपमानित हुए हैं। हम लोग दूर चले जायेंगे और हम पर जो आरोप किया गया है, उसे झूठा साबित करेंगे।"

राजकुमार के सुझाव को दोनों मित्रों ने मान लिया। परंतु उनके सामने यह सवाल उठा कि कहाँ पर जाना होगा! तीनों ने बड़ी देर तक चर्चा की, अंत में कोशाध्यक्ष के पुत्र ने यों कहा–"धन के अभाव में हम कोई कार्य साध नहीं सकते! हम रोहण पर्वत पर जायेंगे, यदि हमारा सितारा बुलंद है तो हमें इंद्र नील मणि प्राप्त हो सकते हैं। उन के द्वारा हम अपने मनोरथों की पूर्ति कर सकते हैं।"

इस सुझाव को बाक़ी दोनों ने मान लिया। पर्याप्त धन लेकर तीनों रोहण पर्वत की ओर चल पड़े। उनका भाग्य प्रबल था। इसलिए जब उन लोगों ने विशेष श्रम उठाकर खोजा, तब प्रत्येक को एक-एक मूलयवान इंद्र नील मणि प्राप्त हुआ। तब उनकी प्रसन्नता की सीमा न रही। इसके बाद तीनों ने विचार किया–"अरण्य मार्ग यात्रा के लिए हितकर नहीं है। हम इन मूल्यवान रत्नों के साथ कैसे वापस लौटे?"

"मैं मंत्री का पुत्र हूँ, इसलिए ऐसी समस्याओं का हल करना मैं स्वयं जानता हूँ। इसका उपाय मैंने पहले ही सोच रखा है। हम अपने रत्नों को भोजन के साथ निगल डालेंगे। वे हमारे पेटों में सुरक्षित रहेंगे। उन्हें चोर-डाकू खोजकर हड़प नहीं सकते। परसों तक हम रत्नपुर पहुँच ही जायेंगे। वहाँ पर हम जुलाब लेकर रत्नों को पुनः प्राप्त कर सकते हैं।" मंत्री के पुत्र ने सलाह दी।

बाक़ी तीनों को यह उपाय अच्छा लगा। तीनों ने भोजन के साथ अपने-अपने इन्द्र नील मणि को निगल डाला।

सुबुद्धि नामक एक व्यक्ति ने उन तीनों की आँख बचाकर आड़ में रहकर मंत्री के पुत्र की बातें सुनीं। उसने तीनों को इन्द्र नील मणियों को निगलते हुए भी देखा था। वह भी वास्तव में इंद्र नील मणियों के वास्ते उस पर्वत पर आया था। मगर भाग्य ने उसे साथ नहीं दिया, इसलिए अनेक दिनों तक खोज-ढूंढने पर भी उसे एक भी मणि न मिला।

"न मालूम ये तीनों कैसे भाग्यवान हैं। उन्हें अद्‌भुत मणि प्राप्त हुए हैं। मैं भी इन लोगों के साथ यात्रा करके रात के वक़्त जब ये लोग गहरी नींद सोते होंगे, तब इनके पेट काटकर तीनों रत्न हड़प लूंगा।" सुबुद्धि ने अपने मन में सोचा।

यों सोचकर वह आधा कोस की दूर पहले ही चलकर वहाँ पर रुक गया। शीघ्र ही तीनों मित्र उधर आ निकले। तब सुबुद्धि ने उन से पूछा–"दोस्तो! इस भयानक जंगल को अकेले ही पार करने में मुझे डर लगता है। मैं रत्नपुर का निवासी हूँ, वहीं जा रहा हूँ। मेहर्बानी करके क्या मुझे अपने साथ चलेने दोगे?"

उन लोगों ने सोचा कि यदि एक व्यक्ति का और साथ रहा तो अति उत्तम होगा। इसलिए तीनों ने अपनी सम्मति दी।

उस भयानक जंगल के बीच रास्ते से सटकर डाकुओं का एक गाँव था। डाकुओं के सरदार का घर एक दम सड़क पर ही था। उसके पास अनेक पक्षी थे। उनमें से एक पक्षी राहगीरों की सारी जानकारी पाने की अद्‌भुत शक्ति रखता था। चारों यात्रियों को डाकू के घर से होकर गुजरते देख पक्षी ने जोर-शोर से चिल्लाना शुरू किया।

डाकुओं का सरदार पक्षी की बोली जानता था। उसने अपने नौकरों को बुलाकर आदेश दिया–"सुनो, हमारा पक्षी बता रहा है कि उन राहगीरों के पास रत्न हैं, उन्हें जल्दी पकड़ लो।"

विचित्र जुड़वाँ

[१८]

[राक्षस की अनुमति लेकर निशीथ उदयन की खोज में चल पड़ा। इस बीच भूगर्भगृह में स्थित उदयन जहरीले सर्पों द्वारा पहरा देनेवाले कुछ द्वारों को पार कर राक्षस की आराध्या देवी की मूर्ति के निकट पहुँचा। देवी की मूर्ति के भाल से जो धुआँ निकला, उसमें फंसने पर उदयन का दम घुटने लगा। बाद...]

उदयन का दम घुटने के कारण वह भय-कंपित हो सोचने लगा कि अब उसकी मौत निश्चित है, तभी अचानक धुआँ गायब हो गया। इसके पश्चात विविध ध्वनियों के साथ देवी की गुफा गूंज उठी। उदयन की हिम्मत बंध गई। देवी की मूर्ति के सामने खड़े हो उसने कहा–"हे माई! आप के द्वारा इतने सारे लोगों का प्राण लेना कहाँ तक उचित है? उस दुष्ट राक्षस को इस प्रकार और शक्ति प्रदान करने पर जगत का कैसा कल्याण होगा?"

देवी के मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला। इस पर उदयन ने पल भर रुक कर कहा–"हे जगदांबे! अब तक हमने अन्न-जल तथा निद्रा तज कर असंख्य कठिनाइयाँ झेली हैं। भले ही इस प्रयत्न में मेरे प्राण चले जाये पर उस राक्षस का वध किये बिना मैं नहीं लौटूंगा।

कृपया उसके प्राणों का पता देकर जगत का कल्याण कीजिए!"

देवी ने इस बार भी कोई उत्तर नहीं दिया। उदयन ने तलवार खींच कर देवी के हाथ में स्थित गीध पर प्रहार किया। गीध अग्नि कुंड में गिर गया। देवी की मूर्ति अदृश्य हो गई। वह सारा प्रदेश प्रकाश से भर उठा। उदयन ने वापस मुड़ कर देखा, उसने जिन द्वारों को पार किया था, वे सब गायब थे।

उदयन वहाँ से लौट पड़ा। उसे रत्न खचित एक बतख के अण्डे जैसा अण्डा दिखाई दिया। उसे हाथ में लेकर थोड़ी दूर आगे आया, तो वैसा ही एक चांदी का अण्डा दिखाई पड़ा। उसे भी हाथ में लेकर थोड़ा और बढ़ा तो इस बार सोने का अण्डा मिला। उसको भी बटोर कर आगे बढ़ा तो देखता क्या है दाढ़ी वाला जिस कमरे में लटकाया गया था, वह कमरा भी गायब है।

उदयन विस्मय में आकर भूगर्भगृह से बाहर आया। तभी राक्षस के सेवक आकर उसके चारों ओर इकट्ठे हो गये। उनके साथ तड़ाग में हंसों के रूप में स्थित लोग भी अपने पूर्व रूप को प्राप्त कर दिखाई दिये। अपने भाई उदयन को देखते ही संध्याकुमार दौड़ आया और उदयन के साथ आलिंगन किया।

इस बीच राक्षस के सेवकों ने हठात् उदयन को अपने कंधों पर बिठा कर घोषणा कर दी—"आप तो हमारे लिए देवता के समान हैं। हमारे राजा हैं। आप की कृपा से हम लोग मुक्त हुए हैं।"

एक ने देखा कि उदयन के बायें हाथ से खून बह रहा है। वह चिल्ला उठा—"अरे देखते क्या हो? जड़ी-बूटी ले आओ।"

एक ने तत्काल जड़ी-बूडी लाकर उदयन के हाथ में मल दी और उस पर पट्टी बांध दी। इसके बाद उदयन उन सबको साथ ले तड़ाग की ओर बढ़ा। पर आश्चर्य की बात है कि वहाँ पर तड़ाग न था।

चारों तरफ़ वृक्ष भी गायब थे। उदयन ने अपने अनुचरों से पूछा–"यहाँ का तड़ाग कहाँ है?"

"महाराज! तड़ाग अब कहाँ रहा? देवी जी के अदृश्य होने के साथ ये सब भी गायब हो गये हैं!" सब ने एक स्वर में उत्तर दिया।

"तब तो इन शिला प्रतिमाओं की बात क्या होगी?" उदयन ने पूछा।

"उसकी हालत बस यही होगी! तड़ाग तो अदृश्य हो गया है! इन्हें असली रूप कैसे प्राप्त होंगे?" सेवकों ने संदेह प्रकट किया।

"उफ़! कैसा अनर्थ हो गया है! अकारण ही इन सब के प्राणों के हरण का कारण मैं ही हूँ।" इन शब्दों के साथ उदयन अपनी व्यथा प्रकट करने लगा।

थोड़ी देर मौन रह कर उदयन फिर बोला–"हमारे निशीथ कहाँ? दाढ़ी वाला न मालूम कहाँ पर है! राजकुमारियों का भी बिलकुल पता नहीं चल रहा है! हमें तुरंत इन सबका पता लगाना होगा!"

"तब तो चलिये! अभी हम उनकी खोज करेंगे।" सेवकों ने उदयन का उत्साह वर्द्धन किया।

"ऐसी बात नहीं, तुम सब यहीं रहो।" यों समझा कर उन्हें वहीं पहरे पर तैनात करके संध्या कुमार तथा अन्य परिवार को साथ ले उदयन चल पड़ा। उसने सर्व प्रथम राजा प्रतापसिंह के राज्य का पता लगाया। प्रतापसिंह ने उदयन को देख यही कहा–"तुम्हारे चले जाने के बाद यहाँ पर कोई नहीं आया। हाँ, यह तो बताओ कि तुम उस राक्षस से बचकर कैसे आ गये?"

"मुझे उस दुष्ट राक्षस की खबर नहीं मिली। पर मैं उसके माया महल को मटियामेट कर आया हूँ। हाँ, मुझे तो पहले इस बात का पता लगाना है कि मेरा भाई तथा राजकुमारियाँ कहाँ पर हैं?" उदयन ने कहा।

"तुम चाहोगे तो मैं अपने परिवार को भी तुम्हारी मदद के लिए भेज सकता हूँ।" राजा प्रताप ने सहानुभूति दिखाई।

"आपकी कृपा रही, यह पर्याप्त है!" यों कहते उदयन राजा से विदा लेकर अपने परिवार के साथ आगे बढ़ा।

* * *

राजा प्रतापसिंह की बातों पर विश्वास करके उधर निशीथ का राजा के सेवकों को अपने साथ ले जाना खतरनाक सिद्ध हुआ। मौक़ा देख कर प्रतापसिंह के सेवकों ने निशीथ का सर काट डाला और जंगल में फेंक कर चले गये। दूसरे दिन एक मुनि ने उस रास्ते से गुजरते हुए निशीथ के सर तथा धड़ को देखा। उन्हें अपने आश्रम में पहुँचाया, इसके बाद इस बात का इंतज़ार करने लगा कि कोई उस व्यक्ति से संबंधित लोग शायद आ जाये।

थोड़े ही दिनों में महाराजा दानशील का मंत्री उस मुनि के आश्रम में आया। मंत्री ने निशीथ के सिर तथा धड़ को देख पहचान लिया। वह बड़ी चिंता में डूब गया।

मंत्री के दुख को देख मुनि ने सांत्वना देते हुए समझाया—"वत्स! चिंता करने से कोई प्रयोजन नहीं है। तुम दुखी मत होओ। मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूँ। चलो, मैं तुम्हारा एक ही उपकार कर सकता हूँ, वह यह कि मैं तो इस मृत शरीर में प्राण फूंक नहीं सकता, परंतु सदा के लिए इस कलेवर को सड़ने से बचा सकता हूँ।"

"महात्मा! हमें इस से बढ़ कर और क्या चाहिए? इस विपदा के समय आप स्वयं भगवान बन कर आये। हम इस स्थिति में श्रावस्ती पहुँच जाय तो पर्याप्त है। बाक़ी बातें स्वयं महाराजा सोच लेंगे।" मंत्री ने कहा।

मुनि तथा मंत्री कुछ ही दिनों में श्रावस्ती नगर में पहुँचे। निशीथ के कलेवर को देख सब लोग चिंता में डूब गये। संध्याकुमार, उदयन तथा उनकी बूढ़ी माँ

विलाप करने लगे। उसी वक़्त दाढ़ी वाला भी वहाँ पर आ पहुंचा।

दाढ़ीवाला बड़ी ही विचित्र स्थिति में वहाँ पर आया। राक्षस हमेशा उस पर शक करता था। उसने सोचा कि यदि दाढ़ीवाले को अपने जादू के महल में छोड़कर चला जाय तो वह कोई न कोई विपदा ढा देगा। इसलिए राक्षस जब भ्रमण पर निकल पड़ा तब दाढ़ीवाले को भी अपने साथ ले गया।

एक दिन राक्षस के साथ दाढ़ी वाला भी आकाश पथ में संचार कर रहा था। नीचे विशाल सागर लहरा रहा था। ठीक उसी वक़्त उदयन ने देवी के हाथ में स्थित गीध को मार डाला। इधर उदयन का गीध को मारना था, उधर आसमान में गीध रूप में संचार करने वाला राक्षस अपने पूर्व रूप को प्राप्त कर चीख उठा और समुद्र में गिर कर मर गया।

राक्षस के साथ दाढ़ीवाला भी समुद्र में गिरा। वह एक कुशल तैराक था। दो दिन तक समुद्र में तैर कर आखिर अधमरे की हालत में समुद्र के किनारे आ लगा।

दाढ़ीवाले ने राक्षस की मृत्यु को देख समझ लिया कि जादू का महल मिट्टी में मिल गया होगा और अब किसी प्राकार का खतरा न होगा। वह अपने भविष्य के

बारे में सोचते हुए लोगों से पूछने लगा कि समुद्री तट पर कोई नगर है कि नहीं। जब लोगों के मुंह से यह सुना कि श्रवस्ती नगर समुद्र के तट पर है, तब उसकी प्रसन्नता की सीमा न रही।

दाढ़ीवाला खुशी-खुशी जब राजमहल में पहुंचा तब देखता क्या है, वहाँ पर लोग दहाड़े मार कर रो रहे हैं।

दाढ़ीवाले ने इसके पूर्व दुश्मन के अनेक व्यूहों को भेद डाला था। विख्यात राक्षस के हाथों में अनुभव भी प्राप्त कर चुका था। इसलिए वह साधारण मानवों की भाँति जल्द हिम्मत हारनेवाला न था। उसने सबको तसल्ली देते हुए कहा—"अब

तक जो भी हुआ, ठीक ही हुआ। आगे भी अच्छा ही होगा, इसलिए तुम लोग घबराओ मत।"

इसके बाद दाढ़ीवाले ने उदयन को बुला कर समझाया–"उदयन, मुझे लगता है कि यह सब राजा प्रतापसिंह की कुटिल चाल है। भस्म एवं अंजन उसी ने हड़प लिया होगा। पहले हमें उन्हें प्राप्त करना है। तुम जल्दी करो।"

दाढ़ीवाले के मुँह से ये शब्द सुनने के पश्चात उदयन एक भी क्षण वहाँ पर न ठहरा। उसने राजा दानशील से सेना माँग ली। दाढ़ीवाले को साथ ले वह उसी वक़्त मालव राज्य पहुँचा। वहाँ पर देखता क्या है, सारा नगर हरे तोरणों से शोभायमान है। सर्वत्र अलंकार किये गये हैं। उदयन ने लोगों से पूछा। तब उसे मालूम हुआ कि राजा प्रतापसिंह एक साथ तीन राजकुमारियों के साथ विवाह करने जा रहे हैं। इसी अवसर पर सर्वत्र अलंकार किया गया है।

उदयन ने स्वीकार किया कि दाढ़ीवाले की बातें अक्षरशः सही हैं। विस्मय के साथ वे दोनों राजमहल में पहुँचे। विवाह-वेदिका पर क्रमशः सुहासिनी, सुभाषिणी तथा सुकेशिनी बैठी हुई हैं। राजा प्रतापसिंह उत्साहपूर्वक तीन मंगल सूत्र हाथ में लिये हुए है।

उस दृश्य को देखते ही उदयन का क्रोध उबल उठा। उसने पल भर में म्यान से तलवार निकाली, पर दाढ़ीवाले ने उसको रोक दिया। इस बीच सारी सेना ने राजमहल को घेर लिया। राजा प्रतापसिंह के हाथों में बेड़ियाँ पहनाई गईं। इस घटना को देख वह चकित रह गया।

जब प्रताप को सारा हाल मालूम हुआ, तब उसने अपनी पराजय स्वीकार की। अपने अपराधों को मान लिया, साथ ही उसने जो अंजन तथा भस्म हड़प लिये थे, उन्हें वापस कर दिया। इसके बाद उदयन और दाढ़ीवाले को प्रणाम करके

अपनी करनी के लिए क्षमा माँगी– "महाशयो, में अब आप लोगों का गुलाम हूँ। मेरा सर्वस्व आप ही लोगों का है। आप मेरे अपराधों को क्षमा कर दीजिए।"

असंख्य कष्ट उठा कर, खतरों का सामना करके उनकी रक्षा के लिए अपने प्राणों तक को समर्पित करने के लिए तैयार हुए उदयन को देखते ही राजकुमारियों के आनंद की सीमा न रही। वे तीनों अमित उत्साह के साथ आनंद के निकट आकर खड़ी हो गईं। अप्रयत्न ही उनकी आँखों से आनंद बाष्प झर उठे।

पर उदयन के टूटे हाथ को राजकुमारियों ने तुरंत भांप लिया। वास्तव में इस आनंदपूर्ण कोलाहल में सब लोग उदयन के टूटे हाथ की बात भूल गये थे। किंतु मार्गदर्शक दाढ़ीवाला मिनटों में भूगर्भगृह पहुँचा, वहाँ पर गिरे हुए आनंद के हाथ को स्वयं उठा ले आया। अंजनों के प्रयोग से हाथ को जोड़ कर पुनः यथा प्रकार किया गया।

राक्षस ने इसके पूर्व ही राजकुमारियों को गूँगी बनाकर जंगल में छोड़ दिया था। मगर देवी के हाथ का गीध जिस वक़्त मारा गया, तभी राक्षस भी मर गया। राक्षस की मृत्यु के साथ उसके द्वारा प्रयोग किये गये सारे जादू भी जाते रहें।
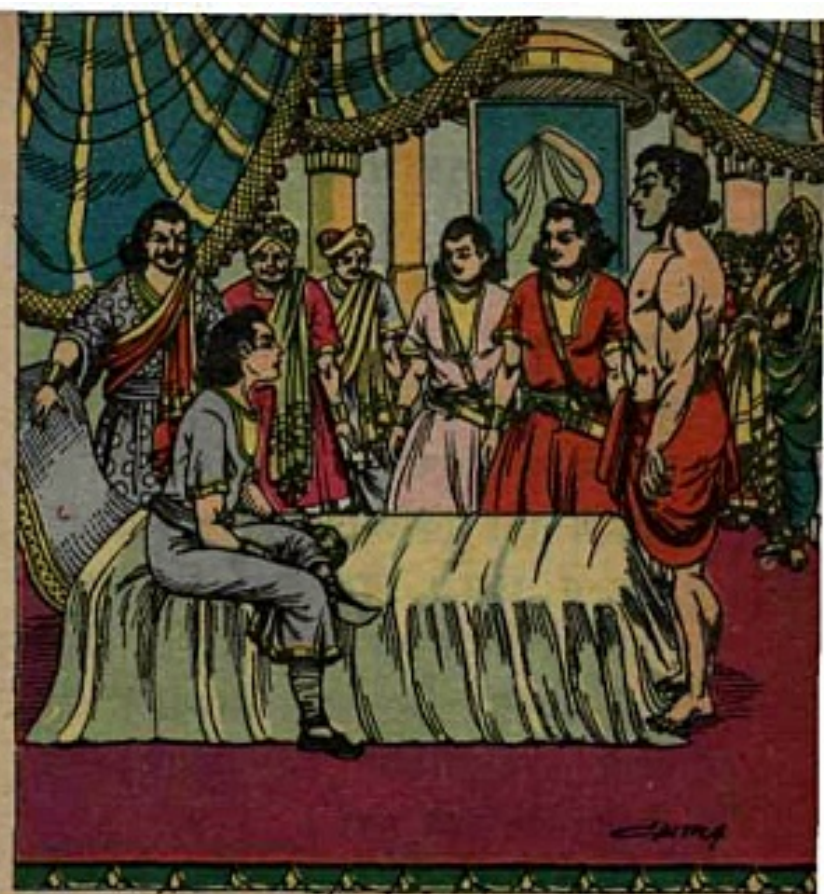
राजकुमारियों का गूँगापन भी जाता रहा। इस वक़्त वे तीनों यथा प्रकार तोतों की भाँति मीठी बोली बोल रही थीं।"

इस प्रकार उदयन ने न केवल राजकुमारियों को मुक्त किया, अपितु मालव राज्य की लक्ष्मी को भी प्राप्त किया। तब सारे परिवार को साथ ले उसने श्रावस्ती नगर में प्रवेश किया। दाढ़ीवाले ने अंजन तथा भस्मों का प्रयोग करके उनके प्रभाव से निशीथ के सर और धड़ को जोड़ कर पुनः प्राण-प्रतिष्ठा की।

राज्य की सारी जनता आनंद की तरंगों में तैरने लगी। राजा तथा रानी ने जुड़वें भाइयों का अभिनंदन करते यहाँ तक

कह दिया कि वे अनेक जन्म धारण करके भी उसके उपकारों से उऋणी नहीं हो सकते।

इसके पश्चात महाराजा दानशील ने तीनों जुड़वें भाइयों को अपने निकट बुलाया, सुहासिनी का हाथ उदयन के हाथ में, सुभाषिणी का हाथ संध्याकुमार के हाथ में तथा सुकेशिनी का हाथ निशीथ के हाथ में रखा। गुरु तुल्य दाढ़ीवाले ने तीनों दंपतियों को हृदयपूर्वक आशीर्वाद दिये, तदनंतर तीनों जुड़वें भाइयों के साथ तीनों राजकुमारियों का विवाह अत्यंत वैभवपूर्वक संपन्न हुआ।

विवाहोत्सव के समाप्त होते ही राजा दानशील ने दाढ़ीवाले को मालव का आधिपत्य स्वीकार करने का निवेदन किया, लेकिन त्यागी तथा निस्वार्थी दाढ़ीवाले के मन में राज्यकांक्षा न थी। राजा प्रतापसिंह ने अपने किये पर पश्चाताप प्रकट किया, इस पर दाढ़ीवाले ने वह राज्य प्रतापसिंह को वापस दिलाया।

तदनंतर राजा दानशील ने अपने राज्य को तीनों जुड़वें भाइयों से बांट लेने की अभ्यर्थना की। मगर जुड़वें भाई इसके लिए तैयार न हुए। सर्व शक्तिशाली उदयन ने राक्षस के महल में जो तीन अण्डे प्राप्त किये थे, उन्हें बाहर निकाला। दाढ़ीवाले की सलाह पर उन अण्डों को अलग-अलग दूर-दूर रखकर फोड़ डाला, जहाँ पर क्रमशः चांदी, सोना तथा रत्नों के दुर्ग उत्पन्न हुए। स्वयं निर्मित उन दुर्गों में तीनों जुड़वें भाई सुखपूर्वक अपने दिन बिताने लगे।

इस व्यस्तता के बीच भी वे एक बात को भूल न पाये। दुष्ट राक्षस के हाथ में बलि हो शिला प्रतिमाओं के रूप को प्राप्त व्यक्तियों के प्रति उदयन के मन में व्यथा थी। उन महान वीरों की स्मृति के रूप में एक सुंदर महल बनवाया और उसके चारों तरफ़ उन प्रतिमाओं को स्तम्भों के रूप में बिठा दिया।

(समाप्त)
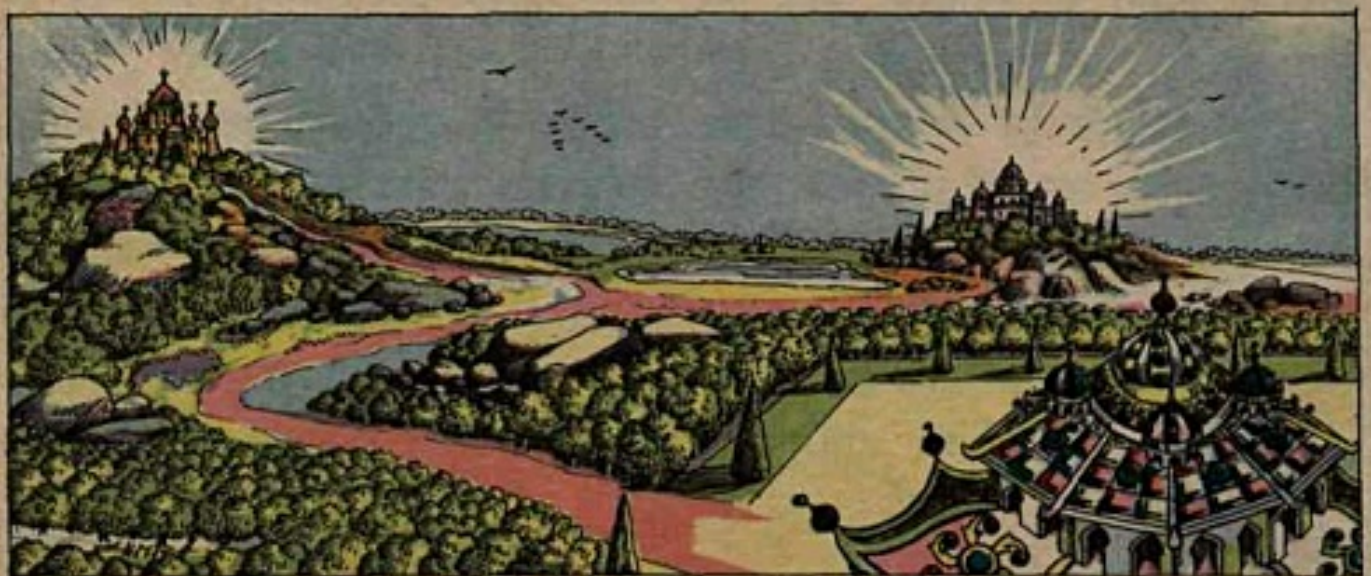
अव्वल दर्जे का स्वार्थी

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, तुम्हारे प्रति श्रद्धा-भक्ति रखनेवाले अनेक कर्मचारी हो सकते हैं, पर यह कहना कठिन है कि राजभक्ति उनके हृदयों में कैसे पैदा होती है और कैसे वह गायब हो जाती है। इस के उदाहरण के रूप में तुम्हें मै स्वर्णसिंह का वृत्तांत सुनाता हूँ। श्रम को बुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा—"प्राचीन काल में जयपुर नगर पर राजा नागवर्मा शासन करता था। उस के शासन में जनता सुखी थी। मगर राजा नागवर्मा के कोई संतान न थी। इससे नागवर्मा ही नहीं, बल्कि उसकी प्रजा भी बड़ी दुखी थी।

बेताल कथाएं

प्रजा यही चाहती थी कि नागवर्मा के अनंतर भी उसी के जैसा शासक हो! लेकिन प्रजा की इच्छा की पूर्ति होने के पहले ही नागवर्मा को वृद्धावस्था ने आ घेरा।

राजा के साथ शासन-कार्य में भी शिथिलता आने लगी। क्यों कि राज्य-भर में राजा की मौत चाहनेवाले अनेक राज-द्रोही पैदा हुए और वे षड़यंत्र रचने लगे। राजा ने संतान के वास्ते जप, तप, होम आदि करते शासन का भार मंत्रियों पर छोड़ रखा था.।

राजद्रोहियों के दल का नेता रजतसिंह नामक सेनापति था। राजा की मौत होते ही किसी भी क्षण पर गद्दी को अपनाने के लिए रजतसिंह ने सारी तैयारियाँ कर रखी थीं। परंतु प्रधान मंत्री धर्मदत्त इस बात के प्रति सजग था कि इस षड़यंत्र के कारण जनता का जीवन अस्त-व्यस्त न हो।

मंत्री धर्मदत्त महान मेधावी था। नागवर्मा के सुस्थिर शासन का कारण भूत धर्मदत्त ही था। सेनापति के षड़यंत्र के बारे में उसे पूरी जानकारी थी। फिर भी उसने सेनापति के षड़यंत्र को विफल बनाने का कोई प्रयत्न नहीं किया। उस का विचार था कि जब सिंहासन का कोई सही वारिस नहीं है, तब किसी विदेशी राजा के गद्दी पर बैठने की अपेक्षा सेनापति का राजा होना उत्तम है। किंतु सेनापति गद्दी के लोभ में पड़कर राजा का अंत न करे, इस के लिए आवश्यक सारा इंतजाम धर्मदत्त ने किया।

इस बीच एक ऐसी घटना हुई जिस से सब की योजनाएँ उल्टी हो गईं। राजा नागवर्मा के एक पुत्र पैदा हुआ। सिंहासन का वारिस उत्पन्न हुआ। सेनापति एक राजा की मृत्यु का इंतज़ार कर रहा था, तो दूसरा राजा पैदा हुआ। सेनापति को लगा कि उस के प्रयत्न में बड़ा धक्का पहुँचा है।

प्रधान मंत्री धर्मदत्त के मन में नई चेतना उदित हुई। वह अब पहले की भांति तटस्थ न था। उस समय तक वह मात्र वृद्ध राजा के प्राणों की रक्षा करता था, अब राजकुमार के प्राणों की रक्षा करने के साथ ही साथ उसे सिंहासन पर बिठाने की जिम्मेदारी भी धर्मदत्त पर आ पड़ी। इसलिए धर्मदत्त ने राजा से एकांत में मिलकर पहली बार रजतसिंह के षड़यंत्रों की उन्हें जानकारी दी।

राजा नागवर्मा ने क्रुद्ध होकर कहा– "क्या रजतसिंह मेरे साथ ऐसा द्रोह करने के लिए तैयार हो गया है? उसे इसी वक़्त बन्दी बनाकर कारागार में डाल दो।"

"महाराज, यह कार्य संभव नहीं है! रजतसिंह का षड़यंत्र सारे राज्य में व्याप्त हो चुका है। यह षड़यंत्र केवल आज का नहीं है। वह चाहे तो इसी वक़्त राजा बन सकता है। उसको इस कार्य से रोकनेवाले उसके अनुचर ही हैं। इस वक़्त हमारी असली समस्या तो रजतसिंह के राजा होने से रोकना नहीं, बल्कि युवराज के प्राणों की रक्षा करना है। साथ ही कालांतर में गद्दी उसी को प्राप्त होने का प्रबंध करना है। पर, यह कार्य गुप्तरूप से हो जाना चाहिए।" धर्मदत्त ने समझाया।

"यह कार्य कैसे संपन्न होगा?" राजा ने उत्सुकतापूर्वक पूछा।

अपने प्रयत्न के विफल होते देख रजतसिंह क्रुद्ध हो राजा के पास आया और बोला–"महाराज, आप चिंता न कीजिए। युवराजा को गायब करनेवाले उस राजद्रोही का मैं अंत कर डालूंगा।"

राजा ने उसकी ओर आश्चर्य के साथ देखा और पूछा–"कौन है वह राजद्रोही?"

"महाराज! और कौन है? आप के प्रधान मंत्री धर्मदत्त ने आप का नमक खाते हुए आप ही के साथ द्रोह किया है, दगा किया है! धर्मदत्त भी कहीं दिखाई नहीं देता।" रजतसिंह ने कहा।

इस पर नागवर्मा ने कोई उत्तर न दिया। वह मौन रहा।

रजतसिंह ने धर्मदत्त तथा युवराजा के वास्ते गुप्तचरों के द्वारा सभी पड़ोसी राज्यों में ढुंढ़वाया, पर कोई फ़ायदा न रहा। इस प्रयत्न में समय व्यर्थ करना उसे वृथा मालूम हुआ। उसने राजा को बन्दी बनाकर अपना राज्याभिषेक करवाया।

रजतसिंह के राजा बनने पर शासन-कर्यों में संपूर्ण परिवर्तन आ गया। जिन पर रजतसिंह को संदेह था कि वे इसके अनुकूल नहीं हैं, उन सब को अपने-अपने पदों से हटा दिया। खासकर धर्मदत्त के रिश्तेदार एंव विश्वास पात्र व्यक्तियों

धर्मदत्त ने अपना निर्णीत योजना राजा को बताई। राजा ने भी उसे मान लिया।

आखिर धर्मदत्त की कल्पना गलत साबित न हुई। रजतसिंह ने राजकुमार को मार डालने की योजना बनाई, पर इस प्रयत्न में भी उसे सफलता नहीं मिली। रजतसिंह की योजना का अमल होने के पूर्व ही युवराज राजमहल से गायब हो गया। यह समाचार प्रकट होते ही राजमहल में हो-हल्ला मचा। अंतःपुर शोक से भर उठा। रानी मूछित हो गई। राजा ने अपने पुत्र को ढूंढ़ने के लिए चारों तरफ़ सैनिकों को भेजा।

को निराश्रय कर दिया गया। जनता का जीवन भी अस्त-व्यस्त हो गया। अनेक लोग देश को छोड़कर चले गये।

परंतु धर्मदत्त का पुत्र स्वर्णसिंह किसी प्रकार से रजतसिंह का अनुग्रह प्राप्त कर सका। स्वर्णसिंह ने हर बार रजतसिंह की योजना का समर्थन करके प्रारंभ से ही उस के प्रति अपार भक्ति प्रदर्शित की। अलावा इसके स्वर्णसिंह शक्ति एंव सामर्थ्य की दृष्टि से अपने पिता से किसी बात में कम न था। यह बात रजतसिंह भली भांति जानता था। शीघ्र ही रजतसिंह ने स्वर्णसिंह को अपना सेनापति नियुक्त किया।

रजतसिंह ने अपने शासन को सुदृढ़ तो बनाया, पर धर्मदत्त का पता न लगने पर वह सशंकित रहा। उसे लगा कि धर्मदत्त तथा युवराजा का वध न करने पर सिंहासन उस के वंश के लिए शाश्वत रूप से हस्तगत नहीं हो सकता।

एक दिन रजतसिंह ने स्वर्णसिंह को बुलाकर कहा—"मेरे राज्य में तुम से बढ़कर राजेभक्त और पराक्रमी दूसरा कोई नहीं है। मेरे अनंतर शासन का अधिकार मेरी पुत्री तथा उसके भावी पति को प्राप्त होगा। यदि तुम एक काम साध सकोगे तो मैं अपनी पुत्री का विवाह तुम्हारे साथ कर दूंगा। तुम्हीं किसी भी उपाय से सही अपने पिता तथा उनके आश्रय में पलनेवाले युवराज को बन्दी बनाकर ले आओ।"

इस मर स्वर्णसिंह ने मुस्कुराकर उत्तर दिया—"आप की आज्ञा का पालन करने के लिए मैं कोई पुरस्कार न चाहूंगा। आप चाहेंगे तो मेरे पिता को ही नहीं बल्कि मैं अपना सिर भी काट कर दे सकता हूं।"

इसके बाद स्वर्णसिंह थोड़ी सेना लेकर चल पड़ा और जंगलों में अपने पिता की खोज करने लगा। उसका प्रयत्न जल्द ही सफल हुआ।

धर्मदत्त जंगल के पहाड़ों के बीच राजकुमार का पालन करते हुए जंगली युवकों का सैनिक दल तैयार करने लगा। कुछ जंगली युवक मंत्री के शिष्य बन गये। वे मंत्री के आदेश पर जयपुर पहुँचकर यह प्रचार करने लगे कि उन्हें योगदृष्टि के द्वारा यह मालूम हो गया है कि जयपुर का युवराजा जीवित है। धीरे-धीरे जयपुर तथा धर्मदत्त के प्रदेश के बीच एक गुप्त रास्ता बनकर तैयार हुआ। हजारों लोग यह प्रचार करते हुए कि वे देश छोड़कर जा रहे हैं, धर्मदत्त से जा मिले।

स्वर्णसिंह जब अपने पिता का पता लगाकर उसके पास पहुँचा, तब तक धर्मदत्त के अधीन बड़ी भारी सेना तैयार हो गई थी। उस सेना को देख स्वर्णसिंह विस्मय में आ गया।

धर्मदत्त ने अपने पुत्र को देख पूछा– "नगर में क्या सभी लोग कुशल हैं? रजतसिंह का शासन कैसा चल रहा है?"

"मैं कुशल-क्षेम का परामर्श करने नहीं आया हूँ।" स्वर्णसिंह ने दृढ़ स्वर में कहा।

"मैं जानता हूँ! तुम मुझे तथा युवराजा को बन्दी बनाकर ले जाने के लिए आये हो। लेकिन यह जान लो कि तुम और तुम्हारे सैनिक यहाँ से प्राणों के साथ लौट नहीं सकते!" धर्मदत्त ने गंभीर स्वर में कहा।

स्वर्णसिंह ने अपने सैनिकों को संबोधित कर गरजकर कहा–"पहले तुम लोग इन्हें बन्दी बनाओ!" इसके दूसरे ही क्षण स्वर्णसिंह के सैनिक जंगली योद्धाओं के हाथों में बन्दी थे। एक जंगली ने स्वर्णसिंह पर प्रहार करके उसे बेहोश बना दिया।

धर्मदत्त अपने पुत्र के चेहरे पर पानी छिड़ककर उसे होश में लाया। इस पर स्वर्णसिंह ने लजाते हुए अपने पिता से क्षमा माँग ली और कहा–"रजतसिंह ने मुझे जो सुख और वैभव प्रदान किये, उनके मद में आकर मैं आप को बन्दी

बनाने आया हूं। आप कृपया मुझे अपने ही पास रहने दीजिए।"

धर्मदत्त ने अस्वीकार करते हुए कहा– "तुम्हारी सहायता की हमें आवश्यकता नहीं है। पर यह जान लो, जो लोग तुम पर भरोसा रखे हुए हैं, उन्हें होनेवाले कष्टों का सामना करो। जाओ, रजतसिंह से कह दो कि शीघ्र ही युद्ध होगा और उसमें रजतसिंह कुत्ते की मौत मरेगा।"

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, स्वर्णसिंह की सारी राजभक्ति अचानक कपूर की भांति कैसे गायब हो गई? क्या वास्तव में उसमें परिवर्तन हुआ है अथवा उसने कोई चाल चली थी? जब वह अपने पिता के साथ रहना चाहता था, तब धर्मदत्त ने उसे क्यों अपने साथ न रखा? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया– "इस बात का कोई आधार नहीं है कि स्वर्णसिंह में राजभक्ति भरी है। उसके निकट रिश्तेजार वगैरह जब विपत्तियों में घिरे हुए थे, तब वह अपनी आत्मरक्षा के हेतु राजा का विश्वास पात्र व्यक्ति बन बैठा है। वास्तव में जो राजभक्त होता है, वह धर्मदत्त की भांति विपत्तियों का सामना करने के लिए तैयार हो जाता है, पर वह अपना स्वार्थ नहीं देखता। उसने सोचा कि अपने पिता को तथा युवराज को बन्दी बनाये बिना खाली हाथ राजधानी को लौट जाएगा तो रजतसिंह उसका वध कर बैठेगा। इसी विचार से वह अपने पिता के साथ रहने को तैयार हो गया। धर्मदत्त ने इसलिए अपने पुत्र को अपने साथ रखने से अस्वीकार किया कि रजतसिंह को गद्दी से हटाने के लिए अपने पुत्र जैसे व्यक्ति की मदद पाने से हीन कार्य दूसरा न होगा।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)
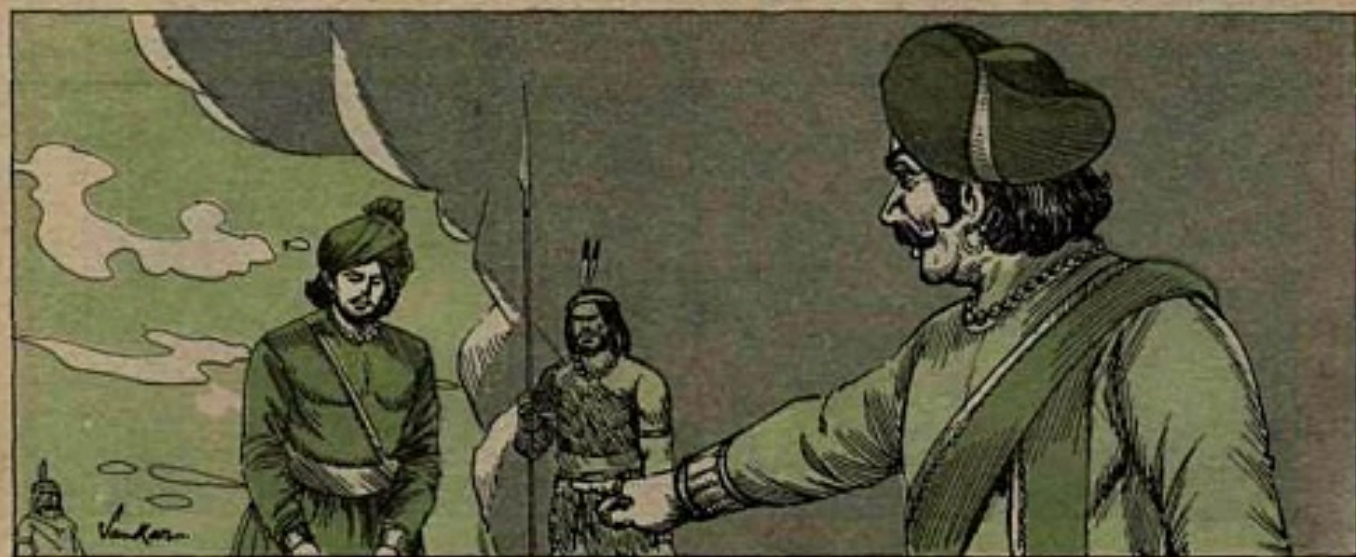
राजा का रहस्य

एक राजा के मूँछें न थीं। इसलिए वे सदा नकली मूँछ चिपकाकर लोगों के सामने आते थे। यह बात सिवाय राजा के नाई के कोई जानता न था।

इस बीच राजा का नाई मर गया। राजा ने दूसरे नाई को नियुक्त करके अपना रहस्य बताया और कहा—"अगर तुम यह बात प्रकट करोगे तो तुम्हारा सर उड़ा दिया जाएगा।" नाई ने घर लौटकर यह बात अपनी बीबी से बताई और समझाया—"यदि यह बात दूसरों पर प्रकट हो गई तो मेरा सिर काट डालेंगे।"

एक बार दूसरे देश से कोई चित्रकार राज दरबार में आया, उसने राजा का चित्र बनाया। चित्र में राजा के मूँछें न थीं। इसे देख राजा चकित हुए और चित्रकार को दुगुना पुरस्कार देकर बोले—"तुम आज ही मेरे देश को छोड़कर चले जाओ। यह रहस्य तुम कहीं प्रकट मत करो।" चित्रकार अन्यमनस्क था, इसलिए वह सर हिलाकर चला गया।

इसके थोड़ी देर बाद सिपाहियों ने आकर नाई को बन्दी बनाया और कहा—"तुमने राजा का रहस्य प्रकट किया है, इसलिए तुम्हें फांसी के तख़्ते पर चढ़ाया जाएगा। कारागार में चलो।" नाई ने सोचा कि यह रहस्य उसकी पत्नी ने प्रकट किया होगा, इसलिए क्रोध में आकरउसे पीटा और सिपाहियों के साथ चला गया। नाई की पत्नी ने यह बात किसी से न कही थी। उसने सोचा कि उसके पुत्र ने इस रहस्य को प्रकट किया होगा, इसलिए नाराज हो उसने अपने बेटे की मरम्मत की।

इस बीच चित्रकार दरबार में लौट आया। राजा ने गरजकर पूछा—"तुम्हें तो देश छोड़कर जाने को कहा था, फिर क्यों लौट आये?" "महराज! मैं बड़ा ही भुलक्कड़ हूँ। आपके चित्र में मूँछें रखना बिलकुल भूल गया। जरा वह चित्र मुझे दिला दीजिए, ठीक किये देता हूँ।" चित्रकार ने कहा।

अपनी अपनी क़िस्मत

वत्सला की माँ उस की दस साल की उम्र में ही मर गई। उसके पिता ने दूसरी शादी की। सौतेली माँ वत्सला को खूब सताने लगी। वैसे वत्सला घर के सारे काम-काज तो करती, साथ ही उसे जंगल में जाकर सूखी लकड़ियाँ बीन लानी पड़ती थी। जंगल में जाने के रास्ते में एक जगह साँप की बांबी थी। वत्सला कई बार सोचती कि बांबी में हाथ डाल दूं तो साँप डस लेगा। इस तरह मर जाने से सारी तक़लीफ़ों से छुट्टी मिल जाएगी। मगर उसका एक छोटा भाई था। वह अपने छोटे भाई को दिल से चाहती थी; वह जानती थी कि उसके मरने पर सौतली माँ छोटे भाई को किसी के घर नौकर बनायेगी।

उन्हीं दिनों में वत्सला का पिता मर गया। वत्सला ने सोचा कि अब उनकी ज़िंदगी कुत्तों से भी ज्यादा गई बीती बन जाएगी। आखिर उसकी कल्पना सच निकली। सौतली माँ ने छोटे भाई को मुखिये के घर नौकर रखा। वत्सला को सौतेली माँ की यह करनी बिलकुल पसंद न आई। उसने कहा–"माँ, वह अभी दस साल का भी नहीं हुआ। काम क्या कर सकेगा? उसे पढ़ने-लिखने दो न।"

"दस साल का न हुआ तो क्या हुआ? पच्चीस साल के जवान के बराबर खाता जो है। ऐसे खाऊ के लिए कमाकर खिलानेवाले तुम्हारे बाप भी न रहे न!" सौतेली माँ ने झिड़ककर कहा।

"मैं अपने छोटे भाई का पेट पालूंगी। जंगल में से थोड़ी और लकड़ियाँ बीन लाऊंगी तो आधा रुपया ज्यादा मिल जाएगा।" वत्सला ने कहा।

राजेन्द्र दुबे

सौतेली माँ ने कोई आपत्ति नहीं उठाई। उसने सावधान कर दिया–"तुम लकड़ी बीन लाने के बहाने घर के काम-काज न करोगी तो मैं चुप न रहूँगी!"

उस दिन से वत्सला घर के काम-काज संभालते हुए जंगल में चली जाती। बहुत सारी लकड़ियाँ चुन लाकर गाँव में बेचा करती थी। यों थोड़े दिन और बीत गये।

सौतेली माँ ने गहने खरीदने के लिए बड़ी रक़म उधार ली थी। अब उसे वत्सला के साथ अपने उधार से भी पिंड छुड़ाने का अच्छा मौक़ा हाथ लगा। उसने एक दिन वत्सला को समझाया–"बेटी! अगले हफ़्ते में तुम्हारी शादी करना चाहती हूँ। कल गजाधर कह रहा था कि यदि मैं तुम्हारी शादी उसके साथ कर दूँ तो वह दो हज़ार रुपये देगा। मैं उस धन से कर्ज चुकाकर छुट्टी पा जाऊँगी।"

सौतेली माँ के मुँह से यह बात सुनने पर उसे लगा कि वह बेहोश होती जा रही है। गजाधर तो कई सालों से बीमार था।

"क्या उस बीमार गजाधर के साथ मेरी शादी करोगी?" वत्सला ने पूछा।

"क्या तुम कोई अप्सरा हो? गजाधर की तबीयत ही कुछ ऐसी ही है। उसे कोई बीमारी नहीं है। तुम नखरे न दिखाओ। चुपचाप इस शादी के लिए मान जाओ। वरना तुम्हारे बाप का कर्ज चुकने वाला नहीं।" सौतेली माँ ने समझाया।

इस बार वत्सला ने इस शादी से बचने के लिए निश्चय ही आत्महत्या करनी चाही। आधी रात के वक़्त वह जंगल की ओर चल पड़ी। साँप की बांबी में हाथ डालकर बांबी के पास लुढ़क पड़ी।

बांबी के निकट एक पेड़ को हाल ही में आश्रय बनाया हुआ एक भूत वत्सला को देख खुश हुआ और उसे डराने के ख्याल से चिल्लाते हुए पेड़ पर से नीचे कूद पड़ा।

मरने के लिए तैयार बैठी वत्सला उस भयंकर भूत को देख डरी नहीं। इस पर भूत आश्चर्य में आकर बोला–"क्या तुम्हें

मुझे देख डर नहीं लग रहा है? मैं एक भूत हूँ, तुम्हें निगल डालूँगा।" यों कहते भूत मुँह खोलकर आगे बढ़ा।

"मेरी सौतेली माँ तुम से भी ज़्यादा भयंकर है।" वत्सला ने उत्तर दिया।

भूत को वत्सला की बात पर विश्वास नहीं हुआ। उसने कहा–"मेरी सौतेली माँ तुम जैसे विकृत नहीं है। मगर तुम से कहीं ज़्यादा क्रूर स्वभाव की है। तुम तो एक ही बार निगल जाओगे, पर मेरी सौतेली माँ ज़िंदगी भर नोच-नोचकर निगलती जाएगी। वे यातनाएँ भोगनेवाला ही जानता है।"

"तब तो तुम्हारी सौतेली माँ को ज़रूर देखना चाहिए।" भूत ने कहा।

"सिर्फ़ देखने से पता कैसे चलेगा? एक दिन मेरी सौतेली माँ के सामने विनम्र बनकर रहोगे तब पता चल जाएगा। तुम इसी रूप में जाओगे तो तुम्हारा आदर भी करेगी। अगर तुम धन देने को तैयार हो जाओगे तो मेरे साथ तुम्हारी शादी भी करेगी।" वत्सला ने बताया।

भूत ने पल भर सोचकर कहा–"तब तो एक काम करेंगे। मैं तुम्हारे जैसा वेष बनऊँगा। तुम्हारी सौतेली माँ मुझे देखकर तुम्हीं मानेगी। एक दिन में तुम्हारी सौतेली माँ के हर आदेश का पालन करके देखूँगा, मेरे लौटने तक तुम यहीं रह जाओ।" वत्सला को लगा कि यह सब बेकार का प्रयास है। मगर भूत के उत्साह को देख उसने मान लिया।

"मैं कल आधी रात तक यहीं रह जाऊँगी, तुम्हें ज़रूर यहाँ पर लौट आना होगा।" वत्सला ने भूत से कहा।

इसके बाद भूत वत्सला का रूप धरकर वहाँ से चला गया। वत्सला दिन भर जंगल में घूमती रही, फिर शाम को पेड़ के पास लौट आई। संध्या तक वत्सला के रूप में स्थित भूत रोते हुए लौट आया।

"अरे तुम तो बहुत जल्द लौट आये! क्या बात है?" वत्सला ने पूछा।

"मैं अब एक पल भी उस भूतकी के यहाँ काम नहीं कर सकता। दिन भर उसने मेरी जान ले ली। पीठ पर इमली की बेंत मारते हुए उसने मुझ से कसकर काम लिया है। धान कुटवाया, पिछवाड़ा खुदवाया, बर्तन आदि मंझवाया, घर साफ़ कराया, लेकिन इतने सारे काम करने के बाद भी भर पेट खाना नहीं खिलाया। अब कहती है कि रात भर आटा पीसना है। मुझ से यह सब न होगा। मैं मान लेता हूँ कि भूतों में भी तुम्हारी सौतेली माँ जैसी दुष्ट नहीं होंगे। मैं जैसे-तैसे उस की आँखों में धूल झोंककर भाग आया।" भूत ने समझाया।

भूत की बातें पूरी भी न हो पाई थीं, तभी वत्सला की सौतेली माँ इमली की बेंत लिये वहाँ आ पहुँची और गरजकर बोली—"मैं जानती थी कि तुम काम करना छोड़ यहाँ पर आ बैठोगी! रांड कहीं की! चलो घर!" अपनी सौतेली माँ को देखते ही वत्सला पेड़ की आड़ में जा छिपी। भूत अपना असली रूप धरकर पेड़ पर जा बैठा।

भूत के भयंकर रूप को देख वत्सला की सौतेली माँ चीख उठी। सदा अपने हर आदेश का पालन करनेवाली वत्सला को भूत के रूप में बदलते देख उस का मति-भ्रमण हो गया। पागलों की भांति चिल्लाते जंगल में भाग गई।

इसके बाद भूत ने धन की एक गठरी वत्सला को देकर कहा—"तुम्हें और तुम्हारी सौतेली माँ को सलाम करता हूँ! भूल से मैं यहाँ पर आ पहुँचा।" यों कहते भूत चमगीदड़ बनकर उड़ गया।

वत्सला धन की गठरी को ले घर पहुँची। उसकी सौतेली माँ जंगल से लौटकर घर न आई। वत्सला ने उसकी खोज कराई, पर उसका पता न चला।

थोड़े दिन बाद वत्सला ने एक युवक के साथ शादी कर ली और अपने छोटे भाई को अपने साथ ही रखा। भूत की कृपा से उसकी सारी तक़लीफ़ें दूर हो गईं।
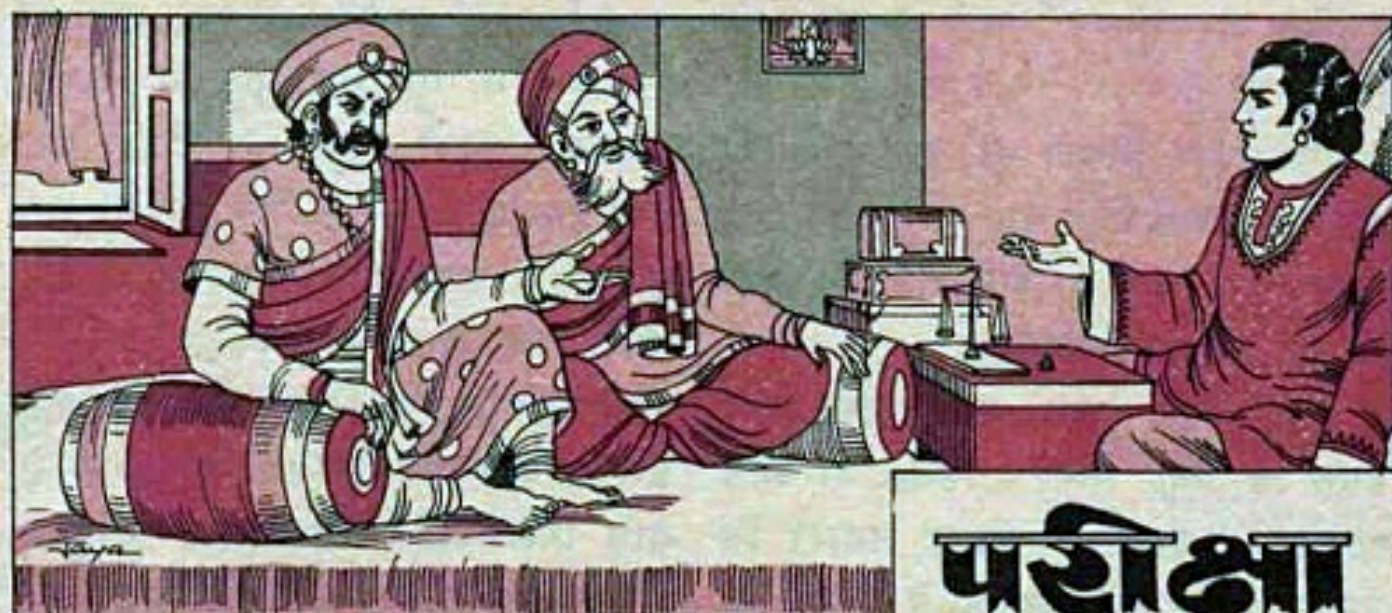
परीक्षा

कहानी उन दिनों की है जब राजा कृष्णदेवराय विजयनगर पर शासन करते थे। उनके दरबार में हीरों का एक पारखी था। देश-विदेशों से अनेक व्यापारी राजा कृष्णदेवराय के यहाँ रत्न बेचने आया करते थे। उन रत्नों की परीक्षा करके उन का मूल्य निर्द्धारित करना हीरों के पारखी का काम था।

हीरों के पारखी का वसंत नामक एक पुत्र था। परंपरागत रूप से प्राप्त होने वाली यह निपुणता वसंत को भी प्राप्त हुई। उसने इस विद्या में अपने पिता के बराबर की प्रवीणता प्राप्त की। लेकिन वह हमेशा मनोरंजन के कार्यक्रमों में अपना समय बिताया करता था।

एक दिन दो धनी व्यक्ति वसंत के घर आये और बोले—"महाशय, हमारे यहाँ कुछ क़ीमत रत्न हैं। यदि आप उनकी परीक्षा करके उनका मूल्य निर्द्धारित करे तो हम आपको एक हज़ार मुद्राएं देंगे।"

वसंत ने मान लिया और दूसरे दिन रत्न ले आने को कहा।

उस दिन रात को उन धनियों में से एक गुप्त रूप से वसंत के घर आया और बोला—"महाशय, कल सवेरे हम दोनों रत्न लेकर आपके घर आ जायेंगे। उनमें दो क़ीमती लाल मणियाँ हैं। उनका मूल्य घटाकर आप इस प्रकार झूठ बोल दीजियेगा कि वे दस सिक्कों से अधिक मूल्यवान नहीं हैं।"

"मैं झूठ बोलकर पाप नहीं कमाता।" वसंत ने स्पष्ट शब्दों में कहा।

मैं वे सब रत्न खरीदने जा रहा हूँ। उन दो रत्नों को सस्ते में खरीदने पर ही मुझे फ़ायदा होगा। यदि आप मेरी मदद करेंगे तो मैं आपको एक हज़ार सिक्के

लता भुवाल्का

समर्पित कर लूंगा।" धनी ने वसंत से विनती की।

एक हज़ार सिक्कों की बात सुनते ही वसंत के मन में लोभ पैदा हो गया। वह थोड़ा नम्र बना। आखिर उसने धनी की शर्त को मान लिया।

दूसरे दिन दूसरा धनी रत्न लेकर वसंत के यहाँ आया। उनमें दो लाल रत्न थे। वसंत ने अंदाज लगाया कि उनका मूल्य कहीं ज्यादा है, फिर भी उसने झूठ-मूठ बता दिया कि उनका मूल्य दस सिक्कों से अधिक न होगा।

दोनों धनी वहाँ से चले गये। इसके बाद वसंत को एक हज़ार सिक्के मिले। उसने उस धन को दावतों तथा विलासों के पीछे खर्च किया।

थोड़े दिन बाद वसंत के पिता का देहांत हो गया। वसंत राजा के पास यह निवेदन करने गया कि परंपरागत रूप से प्राप्त होनेवाली उसके पिता की नौकरी उसे ही दिला दी जाय।

वसंत की प्रार्थना सुनकर महामंत्री तिम्मरुसु ने मुस्कुराते हुए यों कहा—"वसंत, तुम्हारे पिता जब बीमार पड़े, तभी हम यह जांचने के लिए तुम्हारे पास धनियों के वेष बनाकर आये थे कि तुम अपने पिता के पद के योग्य हो या नहीं। हमने उसी दिन यह निश्चय किया कि अपने उत्तरदायित्व को भूलकर व्यापारियों के साथ मिलकर तुम जैसे बक्शीस लेनेवाला व्यक्ति इस नौकरी के योग्य नहीं है। तुम्हारे पिता की जगह उत्तम स्वभाव वाले हीरे के पारखी को हमने कभी का नियुक्त किया है। तुम्हारे पिता विश्वास पात्र व्यक्ति थे, इसलिए उनकी भलमानसी को देख हम तुम्हें दण्ड दिये बिना मुक्त कर रहे हैं। इसीलिए तुम हमारे इस देश को छोड़कर यहाँ से चले जाओ।"

एक अनीति का कार्य करके परंपरा से प्राप्त होनेवाली नौकरी से हाथ धोकर वसंत पछताते हुए वहाँ से चला गया।

१६८. विचित्र पर्वत

यह विचित्र शिलाकृति पेरू देश के आण्डी पर्वतों के बीच है। उसके समीप में ही तांबे की खानें हैं, उस प्रदेश में कौड़ियाँ ज्यादा मिलती हैं, इससे हमें मालूम होता है कि एक जमाने में वहाँ पर समुद्र रहा होगा। अलावा इसके उस प्रदेश में नमक का पहाड़ भी है।

राजा की युक्ति

राजा राघव को मछली मारने का बड़ा शौक था। पर जंगली जानवरों का शिकार खेलना उन्हें पसंद न था। अपने इस शौक की पूर्ति के लिए राजा ने राज्य-भर में तालाब खुदवाये, जनता के लिए पानी का भी इंतज़ाम किया। उन तालाबों में मछलियाँ पालकर उसकी आमदनी को धार्मिक कार्यों में लगा देते थे। उन तालाबों में नहाना-धोना बंद करवाया।

राजा के दो पुत्र थे। बड़ा दस साल का था और छोटा नौ साल का था। एक बार राघव अपने बड़े पुत्र को साथ लेकर राजधानी से बीस मील की दूरी पर स्थित तालाब में मछलियाँ पकड़ने चले गये। दोनों पानी में कांटे डालकर बैठ गये।

शाम तक उनके कांटों में एक भी मछली नहीं फंसी। आखिर वे ऊब भी गये, पर इतने में ही राजकुमार के कांटे में एक बड़ी मछली फंस गई। वह शायद भारी मछली होगी। उसे ऊपर खींचना राजकुमार के लिए मुश्किल मालूम हुआ। इसलिए राजा अपने पुत्र के कांटे को पकड़ कर ऊपर खींचने लगे। जब मछली पानी पर आ गई, तब वह चमक उठी। वह आकृति और परिमाण में भी असाधारण थी। पानी पर आते ही उसे पकड़ने के लिए राजकुमार एक गोल जाल लिए तैयार खड़ा था।

मछली तो जाल में फंस गई, मगर उसके बोझ से राजकुमार झूमकर पानी में गिर पड़ा। जाल के साथ मछली किनारे आ लगी। राजा के सेवकों ने राजकुमार को पानी से बाहर निकाला। राजा तथा राजकुमार उस अनोखी मछली को देखने उसके निकट पहुँचे। तब तक मछली

दुगुनी हो गई थी। राजकुमार उसे पकड़ने को हुआ और वह उस मछली को छुआ ही था कि संध्या की उस रोशनी में मछली विचित्र ढंग से बदल गई और अपने पंख फैलाकर आसमान में उड़ गयी। राजकुमार डर के मारे कांप उठा।

राजमहल में लौटने पर रात को राजकुमार को तेज़ बुखार चढ़ आया। एक सप्ताह बाद राजा को अपनी उप राजधानी रामगढ़ को जाना था। यह कार्यक्रम पहले से ही निर्णय हो चुका था। राजा तथा उनके परिवार का भारी पैमाने पर वहाँ स्वागत किया जानेवाला था। क्योंकि राजा पांच साल बाद उस नगर में पधार रहे थे।

मगर अचानक राजकुमार के अस्वस्थ होने से राजा को बड़ा धक्का लगा और उन्हें दुख हुआ। राजा ने दरबारी वैद्य को बुलवा कर जांच कराई।

वैद्य ने राजकुमार की जांच करके बताया–"महाराज! राजकुमार के मन पर कोई गहरा आघात पहुँचा है। राजकुमार को सोने के लिए मैंने बढ़िया दवा दे दी है। दवा का अच्छा असर होगा, इसलिए आप चिंता न करें।"

पांचवें दिन तक राजकुमार का बुखार उतर गया, पर वह बहुत ही कमज़ोर था।

"पिताजी! मैं इस वक़्त तो बिलकुल स्वस्थ हूँ। मैं भी आप के साथ रामगढ़ चलूंगा।" राजकुमार ने अपने पिता से अनुरोध किया।

पर दरबारी वैद्य ने मना करते हुए समझाया–"राजकुमार! तुम अभी तक पूर्ण स्वस्थ नहीं हुए हो। पंद्रह दिन तक तुम यहाँ से हिल नहीं सकते। तुम्हारी नसें बहुत ही दुर्बल हो गई हैं। यदि किसी भी प्रकार से तुम्हारे शरीर में उद्रेक पैदा हुआ तो तुम्हारी बीमारी खतरनाक बन सकती है।"

रानी ने भी राजकुमार को अनेक प्रकार से समझाया। लेकिन राजकुमार ने

जिद की, सब के मना करने पर उसने अन्न-जल भी त्याग दिया।

"क्या राजकुमार को रामगढ़ ले जाना सचमुच हानिकारक है?" राजा ने एकांत में दरबारी वैद्य से पूछा।"

इस सवाल के जवाब के रूप में वैद्य ने अपना पूर्वानुभव यों सुनाया:–

"महाराज, मैं ने काशी में वैद्यक शिक्षा समाप्त करने के बाद इसी प्रकार की एक घटना देखी थी। आप कृपया उस घटना को सुनकर अपना निर्णय लीजिए। काशी में एक चीनी व्यापारी का इकलौता पुत्र था। उसकी बुद्धि बड़ी क्रूर थी। जिस गोदाम में चीनी के बोरे थे, उसमें चिउंटियाँ जमा हो जाती थीं। व्यापारी का लड़का उन चिउंटियों को देख खुश हो जाया करता था। उसके पिता ने अनेक बार समझाया कि ऐसा करना ठीक नहीं है। पर लड़के ने अपने पिता की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया। एक दिन वह अपने दोस्तों के साथ जाकर मनोरंजन करना चाहता था, पर उस की माँ ने खर्च के लिए पैसे नहीं दिये। इस पर वह रूठ गया और अपने घर के समीप के एक बगीचे में जाकर एक पेड़ के नीचे जा बैठा।

"तुम चिंता क्यों करते हो? मेरे साथ चलो, तुम्हें मैं बहुत सारा सोना दूंगा।" लड़के को कहीं से ये शब्द सुनाई दिये। उसने चारों ओर अपनी नज़र दौड़ाई, लेकिन उसे कोई दिखाई नहीं दिया।

"कौन है यह बात करनेवाला?" लड़के ने पूछा।

"मैं चिउंटियों का राजा हूं। तुम अपने पैर के अंगूठे के पास देख लो।" जवाब मिला।

लड़के ने अपने बायें पैर के अंगूठे के पास एक चिउंटी को देख उसे पकड़ना चाहा। वह बढ़ता गया और आखिर बढ़ते-बढ़ते वह एक हाथी के बराबर का हो गया।

लड़का चकित रह गया, फिर डर कर घर की ओर भाग खड़ा हुआ। उस की माँ ने देखा, लड़के का शरीर बुखार के मारे तप रहा है। दो दिन तक बुखार उतरने का नाम तक न ले रहा था। इस पर दरबारी वैद्य के गुरु के पास खबर भेजी गई। उन्होंने अपने शिष्य को भेजा। उसने अपने गुरु की सलाह लेकर लड़के का इलाज करना शुरू किया। आखिर थोड़े समय बाद बुखार उतर गया। मगर लड़का बहुत कमज़ोर हो चला था। उस हालत में वह लड़का वैद्य की सलाह न मानकर कहीं कोई कुश्ती देखने गया। कुश्ती को देखते वक़्त लड़के का उद्रेक उमड़ पड़ा चौर वह फिर बीमार हो गया। वह घर पहुँचा और सो गया। वह आखिर पागल हुआ, जिसका कोई इलाज़ न था।

दरबारी वैद्य ने राजा को यह घटना सुनाकर कहा–"महाराज, इस हालत में राजकुमार को रामगढ़ ले जाना खतरे से खाली नहीं है। यदि फिर भी आप ले जाते हैं तो इसकी जिम्मेदारी आप ही की होगी।"

मगर राजा की समझ में न आया कि क्या किया जाय। लड़के को समझाने पर मानता न था। इस पर वैद्य ने राजा को सलाह दी कि राजा दरबारी जादूगर की सलाह ले। राजकुमार का ज्योतिष और अलौकिक शक्तियों पर गहरा

विश्वास था। इसके आधार पर जादू किया जा सकता था।

दरबारी जादूगर ने एकांत में राजा के दर्शन करके सारी बातें जान लीं और कहा–"महाराज, आप चिंता न कीजिए। हमारे दरबारी ज्योतिषी की मदद से मैं छोटा सा इंद्रजाल करके राजकुमार के मन को बदल डालूंगा। वह बिलकुल स्वस्थ हो जाएगा।"

जादूगर के पूछने पर राजा ने अपना निर्णय बताया कि रामगढ़ में राजा तथा छोटा राजकुमार जा रहे हैं और राजधानी में महारानी बड़े राजकुमार की देखभाल करने के लिए राजमहल में ही रहनेवाली हैं।

उस दिन दुपहर को दरबारी ज्योतिषी ने राजकुमार के पास जाकर उसके स्वास्थ्य के बारे में पूछा। राजकुमार ने बताया कि वैसे उसकी तबीयत तो ठीक है, पर कमजोरी ज्यादा है। राजकुमार की बातें सुन ज्योतिषी हंस पड़ा। राजकुमार ने आश्चर्य में आकर ज्यनेतिषी से हंसने का कारण पूछा।

इस पर ज्योतिषी ने जवाब दिया– "राजकुमार, यह साधारण कमज़ोरी नहीं है। असली बात यह है कि तुम्हारे लिए सही इलाज नहीं हुआ है। तुम्हारे बदन में अब भी बीमारी गुप्त रूप से है।"

"यह तुम क्या कहते हो? मैं तो पिताजी के साथ रामगढ़ के उत्सव में भाग लेने जानेवाला हूं।" राजकुमार ने कहा। राजकुमार ने यह भी बताया कि रामगढ़ जाने पर वैद्य तो आपत्ति उठा रहे हैं, इस पर उसने रामगढ़ ले जाने तक अन्न-जल ग्रहण न करने का अपना निश्चय भी सुनाया है।

"तुम जाना चाहो तो जा सकते हो, लेकिन हम यह जांच कर देखेंगे कि तुम्हारी यात्रा के लिए ग्रह आदि अनुकूल हैं या नहीं। हमें तो यह जान लेना है कि यदि वहां पर तुम्हें कोई विपत्ति पैदा हो जाय तो उसका

सामना ग्रह कर सकते हैं या नहीं! सबके सामने एक प्रयोग करके उसे देखने के लिए राजा, रानी, मंत्री वगैरह को बुला लेंगे, समझें! लेकिन मेरी एक शर्त है–तुम्हें मेरे निर्णय को मान लेना होगा। वरना मैं बेकार यह सारी मेहनत क्यों उठाऊँ?" ज्योतिषी ने कहा।

"तुम अपना प्रयोग करो! मैं तुम्हारे निर्णय को मान लेता हूँ।" राजकुमार ने कहा।

उस दिन शाम को राजमहल के एक विशाल कक्ष में राजा, रानी, मंत्री तथा अन्य प्रमुख व्यक्ति आ पहुँचे। दरबारी ज्योतिषी ने प्रवेश करके अपनी थैली में से राजकुमारों की जन्म कुंडलियाँ निकालीं। बड़े राजकुमार की जन्म कुंडली पढ़ कर सिर चालन किया, तदुपरांत कागज़ के दो टुकड़े निकाल कर राजा के हाथ दिया। उन पर दोनों राजकुमारों के नाम अलग-अलग लिखे हुए थे।

ज्योतिषी ने राजा के हाथ से बड़े राजकुमार के नामवाला कागज़ लेकर उसे राजा के द्वारा जलवा दिया। इस के बाद उसका भस्म अपने बायें हाथ में ले बोला– "यदि बड़े राजकुमार का रामगढ़ जाना मंगलदायक हो तो जला हुआ यह कागज़ पूर्ववत हो जाएगा।" यों कहते अपनी दायीं हथेली को बायीं हथेली पर रखकर अपने हाथों में एक जेबरूमाल ढकवा दिया, तब हथेलियाँ मल दीं। मगर इस

बार उसने अपने हाथों पर से जेबरूमाल हटा कर देखा तो पूर्ववत कागज़ क्या, भस्म भी न था।

इसके बाद दूसरे राजकुमार के नामवाले कागज़ के टुकड़े को जलवा कर उसके भस्म को भी पहले की भांति अपनी हथेलियों के बीच रगड़ डाली। इस बार उसने जेबरूमाल हटाकर देखा तो वह कागज़ प्रत्यक्ष था। उस पर दूसरे राजकुमार का नाम लिखा हुआ था!

"इस प्रयोग से यह साबित होता है कि बड़े राजकुमार का रामगढ़ जाना खैरियत नहीं है, इससे हानि हो सकती है। बड़े राजकुमार! तुम राजधानी में ही रहकर आराम करो! क्या तुम्हें मेरी सलाह पसंद आ गई?" ज्योतिषी ने पूछा।

"मैं तुम्हारी सलाह के मुताबिक़ ही करूँगा।" बड़े राजकुमार ने उत्तर दिया।

रामगढ़ की यात्रा से लौटने के बाद राजा ने दरबारी ज्योतिषी तथा जादूगर को अपने रहस्य कक्ष में बुलवा कर जादूगर से पूछा–"तुमने वह जादू कैसे किया था?"

"माहाराज, वह तो बड़ा ही सरल है! मैंने कागज़ के तीन टुकड़े लिये। तीनों एक ही रंग और एक ही माप के थे। उनमें दो पर मैंने छोटे राजकुमार का नाम लिखा। तीसरे पर बड़े राजकुमार का नाम लिखा। ज्योतिषी के बायें हाथ में एक चौड़ा आभूषण है। वह नवग्रह कंगण है। छोटे राजकुमार के नामवाले दो टुकड़ों में से एक को उस कंगण के नीचे दबा दिया। फिर क्या था, मेरी ओर से ज्योतिषी ने ही इंद्रजाल किया। मगर मैंने पहले उनके द्वारा यह काम करा कर जांच की। जेबरूमाल के नीचे कागज़ के भस्म को मसलते वक़्त छिपाये गये कागज़ के टुकड़े को हाथ में लेना कोई मुश्किल का काम नहीं है।" दरबारी जादूगर ने कहा।

राजकुमार के स्वास्थ्य को सुधारनेवाले ज्योतिषी तथा जादूगर को राजा ने एक-एक सौ स्वर्णमुद्राओं की थैली भेंट की।

बचपन की सीख

एक लुटेरे दल का सरदार बहुत समय बाद पकड़ा गया तो उसे मौत की सजा सुना दी गई। उसके अनुचर अपने सरदार के प्रति बड़ी श्रद्धा रखते थे। इसलिए ज्यों ही सरदार सिपाहियों के हाथ लगा, त्यों ही उसके अनुचरों ने युवराज को उठा ले जाकर संदेशा भेजा—"यदि हमारे सरदार को मुक्त न करेंगे तो राजकुमार के प्राण लिये जायेंगे।" फिर भी राजा ने इस धमकी की परवाह किये बिना सरदार को फांसी की सजा सुना दी।

दूसरे दिन सरदार को फांसी के तख़्ते पर चढ़ाया जाने वाला था। वह सीखचों के पीछे बैठकर अपने बचपन की बातें याद करने लगा। बचपन में जब एक लड़के ने उसके खिलौने को तोड़ दिया, वह भी उसका खिलौना खींचकर तोड़ने को हुआ। तब उसकी माँ ने समझाया था—"बेटा, तुम अगर उसके खिलौने को तोड़ दोगे तो क्या तुम्हारा टूटा खिलौना कहीं जुड़ सकता है?" यों समझाकर उस लड़के को खिलौना वापस दिलाया था।

उसने सोचा, यदि उसकी माँ उसके बचपन में मर न जाती तो उसकी ज़िंदगी कुछ और होती! तभी घूँघट काढ़े युवराज की पत्नी सीखचों के पास आई और रोकर बोली—"भाई, मेरे पति के प्राण बचाओ!" चोरों के सरदार ने पल भर सोचकर कहा—"बहन, तुम जाओ, तुम्हारे पति के प्राणों के लिए कोई ख़तरा न होगा।" प्रातःकाल ही युवराज सकुशल राजमहल को लौट आया। दूसरे दिन चोरों के सरदार की सजा रद्द हुई।

भगवान की गवाही

एक गाँव में भरतसिंह नामक एक डाकू था। चोरी करना व डाका डालना उसके वंश का पेशा था। उसके बाप-दादा भी डाकू ही थे। भरतसिंह के एक बहन थी। उसके भगवानसिंह नामक एक लड़का था। उसे चोरविद्या सीखने के लिए भगवानसिंह की माँने अपने भाई भरतसिंह के यहाँ भेज दिया।

भगवानसिंह को जन्म के साथ डाकू के सभी गुण प्राप्त हुए। इसलिए वह अपने मामा के अधीन में रहते उससे बढ़कर कुशल डाकू बना। इस कारण भरतसिंह भगवान को साथ लिये बिना कभी चोरी करने जाता न था।

एक बार भरत और भगवान चोरी करने के लिए पड़ोसी गाँव में गये। वहाँ पहुँचते-पहुंचते अंधेरा फैल गया। वहाँ का न्यायाधिकारी बड़ा धनी था। यह बात मालूम होने पर उसी के घर दोनों ने चोरी करने का निश्चय किया।

न्यायाधिकारी के कोई संतान न थी। वे अकसर व्रत और उपवास किया करते थे। न्यायाधिकारी प्रति दिन रात बीते घर लौटता था। यह बात जानकर भरत और भगवान ने जल्द ही चोरी करके भागना चाहा।

"मुझे भूख सता रही है! खाने को शायद कुछ मिल जाय, ढूंढ़ लेता हूं।" भगवान ने कहा।

"मैं छत पर के कमरे में जाकर देख लेता हूं, शायद कुछ हाथ लगे। हम दोनों में से जो भी पहले आ जावे तो इसी पेड़ के नीचे इंतज़ार करना होगा।" भरत यह कहकर छत पर चला गया।

भगवान भीतर पहुंचा। दर्वाजे पर कुंडी चढ़ा दी। बिल्ली की भांति आहट

सुरेश कुमार अग्रवाल

किये बिना रसोई तक गया, तब भीतर झांक कर देखा। न्यायाधिकारी की पत्नी आंचल फैलाये लेट कर ऊँघ रही थी। देवता के कमरे के सापने पक्वान्न सजाये गये थे। उनकी गंध के आते ही भगवानसिंह की जान में जान आ गई।

बात यह थी कि वह एकादशी का दिन था। न्यायाधिकारी तथा उसकी पत्नी ने दिन भर उपवास किया था। रात के खाने के लिए न्यायाधिकारी की पत्नी ने खीर तथा दही बड़े बनाये और अपने पति का इंतजार करते ऊँघ गई।

भगवान ने ताबड़-तोड़ खीर और दही-बड़े खा लिये। उसने जिंदगी भर ऐसे अच्छे पदार्थ खाये न थे। अब वह लौटना ही चाहता था, तभी पिछवाड़े की ओर से किसी ने दर्वाजे पर दस्तक दी।

आहट पाकर घरवाली जाग उठी– 'अभी आई, अभी आई' चिल्लाते उठकर चली गई। भगवानसिंह बाहर जा नहीं सकता था, इसलिए वह रसोई घर की अटारी पर जा छिपा।

दर्वाजे पर दस्तक देनेवाला व्यक्ति न्यायाधिकारी था। उसे भी भूख सता रही थी। इसलिए वह सीधे रसोई में आया और पत्नी से पूछा–"सुनो, खाना तैयार है न?"

"मैं आप ही का इंतजार कर रही थी।" यों कहते उसने रसोई में पहुँचकर देखा, सारे बर्तन एक दम खाली थे।

न्यायाधिकारी ने गुस्से में आकर कहा– "तुम मेरे लौटने तक अपनी भूख रोक न पाई। सारा खाना खा डाला?"

"मैंने खाया है? क्या मैंने आज तक तुम्हारे खाये बिना कभी खाया है? मैंने खाया या नहीं, खुद भगवान जानता है।" न्यायाधिकारी की पत्नी ने कहा।

"अगर तुम ने नहीं खाया तो और खाएगा ही कौन? यहां पर है ही कौन?" पति ने पूछा।

"मैं थोड़ा ऊँघ गई, शायद उस वक़्त भगवान ने खा लिया हो!" पत्नी ने कहा।

तुम्हारी पीठ पर चार डंडे बरसा दूँ तभी तुम्हारे मुंह से सच बात निकलेगी!" यों कहते न्यायाधिकारी कहीं से डण्डा उठा लाया।

यह सब अपनी आँखों से देखनेवाले भगवानसिंह को न्यायाधिकारी पर बड़ा क्रोध आया। वह अटारी पर से पति-पत्नी के बीच कूद पड़ा और बोला–"इनका कहना बिलकुल सही है, मैं ही भगवान हूँ। मैं ने तुम दोनों का नाश्ता खा डाला है। इनको अकारण क्यों पीटते हो?"

न्यायाधिकारी का चेहरा पीला पड़ गया और वह भगवान की ओर देखता ही रह गया।

इतने में बाहर से पुकार सुनाई पड़ी– "भगवान! भगवान!"

"अभी आया!" यों कहते भगवान घर से बाहर चला गया।

भरत ने छत पर बड़ी खोज की। उसे कुछ भी हाथ न लगा। थोड़ी देर बाद उसे रसोई घर में से कोई बातचीत सुनाई दी। निकट जाकर कान लगाया। तो उसे 'भगवान' शब्द तथा उसका जवाब भी सुनाई दिया। भरत ने सोचा कि उसका भांजा घरवालों के हाथ पड़ गया है। डरकर उसने अपने भांजे को पुकारा। भगवान का उत्तर सुनकर भरत के आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

जब दोनों लौट रहे थे, तब भगवानसिंह के मुंह से सारी बातें सुन भरतसिंह ने उसकी तारीफ़ करते हुए कहा–"अरे भगवान, तुम सच्चे चोर हो! तुमने न केवल चोरी की, बल्कि घर भर के लोगों के सामने अपनी चोरी की बात भी बताई!"

इस बीच न्यायाधिकारी की पत्नी को लगा कि वे चोर होंगे, वह चिल्ला उठी— "अजी, वे लोग चोर हैं! पकड़ लो! देखते क्या हो?" तब न्यायाधिकारी बाहर दौड़ा, पर देखता क्या है, तब तक चोर आँखों से ओझल हो गये थे।

फ़ैसला रद्द

महतो और उसकी पत्नी में अनबन थी। इमसे ऊबकर महतो की पत्नी अपनी लड़की को गोद में ले मायके के लिए निकल पड़ी। महतो ने बताया कि लड़की को यहीं पर छोड़कर अकेली चली जाओ। इस पर महतो की पत्नी ने राजा से शिकायत की। राजा ने महतो की सारी बातें सुनकर फ़ैसला सुनाया–"बेटी, तुम अपने मायके से जब ससुराल आई, तब तुम्हें कोई संतान न थी। पति के द्वारा जो संतान होती है, उसे पति को सौंपकर तुम्हें खाली हाथ मायके जाना उचित होगा।"

इसके बाद महतो की लड़की उसी के पास पली और बड़ी हो गई। उसे मालूम हुआ कि राजा ने उसके विषय में अपनी माता के विरुद्ध फ़ैसला सुनाया है। पिता से उसे जब-तब जो पैसे मिलते थे, वे सब जमा करके उसने दो बछड़े ख़रीदे। उन्हें ले जाकर राजा की गायें जहाँ चरती थीं, वहीं ले जाकर अपने बछड़ों को भी चराने लगी।

थोड़े दिन बाद राजा की गायों में से एक गाय ने बछड़ा दिया। महतो की लड़की उस बछड़े को उठाकर अपने घर चली गई। यह बात जब राजा को मालूम हुई, तब राजा ने उस लड़की को बुलाकर कैफ़ियत माँगी।

"महाराज! इस बछड़े का पिता मेरा बैल है। आप ने यह फ़ैसला सुनाकर मुझे मेरे पिता के हाथ सौंप दिया था कि बच्चे पिता को ही मिल जाने चाहिए! आपको याद होगा।" लड़की ने उत्तर दिया।

इसपर राजा लज्जित हुआ और अपना फ़ैसला रद्द करके उस लड़की को उसकी माँ के हाथ सौंप दिया। इसके बाद अपनी पुत्री के वास्ते महतो ने झगड़ा करना बन्द करके अपनी पत्नी को अपने घर बुला लिया।

निजी पुत्र

सूरजसिंह का इकलौता पुत्र करमसिंह था। पिता से सूरजसिंह को थोड़ी-बहुत जायदाद मिली थी, लेकिन उसने अपनी बुद्धिकुशलता और परिश्रम के द्वारा जमीन-जायदाद में बड़ी वृद्धि की। वह धनवान भी कहलाया। मगर उस की चिंता का कारण यह था कि उस का पुत्र करमसिंह बड़ा ही नटखट निकला। पढ़ने-लिखने में उसका मन नहीं लगता था। पानी की तरह धन खर्च करने में वह कुशल निकला। सूरजसिंह ने डांट-डपट कर अपने पुत्र को अच्छे रास्ते पर लाना चाहा, लेकिन उसका सारा प्रयत्न बेकार साबित हुआ।

इस हालत में एक दिन सूरजसिंह का एक मित्र दुर्गादत्त उसे देखने आया। बातचीत के सिलसिले मे दुर्गादत्त ने पूछा–"सूरज! तुम्हारे पुत्र का रवैया देखने से ऐसा लगता है कि वह किसी काम का नहीं।" इसी संदर्भ में उसने आगे कहा–"तुम्हारे पुत्र को सही रास्ते पर लाने का मैं एक उपाय बता देता हूँ, कोशिश करके देखो।" सूरजसिंह के मन में यह शंका जरूर थी कि दुर्गादत्त का उपाय सफल होगा या नहीं, फिर भी यदि अपने पुत्र में परिवर्तन आ गया तो इस से बढ़कर उसे चाहिए ही क्या, यही सोचकर उसने उस उपाय को अमल करने की स्वीकृति दी।

इसके चार दिन बाद एक बूढ़ा अपने पंद्रह साल के लड़के को साथ लें आ पहुँचा और उसने सूरजसिंह से मिन्नत की कि उसे कोई काम दे।

सूरजसिंह ने पूछा–"तुम लोग क्या क्या काम कर सकते हो?"

बूढ़े ने लड़के की ओर इशारा करते हुए कहा–"यह लड़का सभी काम करेगा।

सत्यमोहन बत्रा

में तो बूढ़ा हूँ, इसलिए सिर्फ़ आपके घर की रखवाली कर सकता हूँ।"

वे लोग यों बात कर ही रहे थे कि तभी करमसिंह बाहर से घर लौटा और भीतर जाने को हुआ। करमसिंह को देख देखते ही बूढ़ा चिल्ला उठा–"धरमसिंह!" और बेहोश हो गया।

सूरजसिंह ने अपने नौकरों को बुलाकर बूढ़े का उपचार करने का आदेश दिया। थोड़ी देर बाद बूढ़ा होश में आया, तब वह फिर बोला–"धरमसिंह!" उसने करमसिंह को अपने निकट बुलाकर उसके पैर पर स्थित लंबे दाग को दिखाते हुए सूरजसिंह से कहा–"बाबू साहब! क्या आप मुझे पहचानते हैं? पंद्रह साल पहले यमुना की बाढ़ में मैंने तुम्हें और तुम्हारे पुत्र को बहते देख किनारे लगा दिया था?"

सूरजसिंह ने याद करने का अभिनय करते हुए कहा–"अरे, तुम हो? खैरियत हो न? मैं पहचान ही नहीं पाया। बुरा मत मानो।"

"बाबू साहब! मेरी बात पर ध्यान दो, उस गड़बड़ में आप मेरे पोते को अपना बेटा समझकर अपने साथ ले गये। मैं आप के बच्चे को उठाकर आप की घोड़ा-गाड़ी के पीछे बहुत दूर तक दौड़ता गया,

लेकिन क्या बताऊँ, गाड़ी तेजी से आगे निकल गई। लीजिए, यही वह बच्चा है! मैं ने लाड़ से पाला-पोसा है। मगर मैं गरीब था, इसलिए इससे काम-काज कराना पड़ा।" इन शब्दों के साथ बूढ़े ने अपने साथ लाये लड़के को दिखाया।

सूरजसिंह ने उस लड़के के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा–"बेटा, करमसिंह! मुझे आज बड़ी खुशी है कि तुम फिर मुझे मिल गये!" इसके बाद बूढ़े ने करमसिंह को अपने निकट बुलाकर कहा–"मेरे पोते को तुम ने आज तक राजा बेटा की तरह पाला-पोसा और बड़ा किया। मैं तुम्हारे इस ऋण को कभी चुका नहीं सकता।"

करमसिंह को यह सब कुछ विचित्र-सा लगा। लेकिन उसे एक बात स्पष्ट हो गई। वह यह कि वह सूरजसिंह का पुत्र नहीं है। बूढ़े का पोता है। उसका नाम करमसिंह नहीं, धरमसिंह है। इस बात की कल्पना मात्र से उसका दुख उमड़ पड़ा।

इसके बाद बूढ़ा करमसिंह को अपने साथ ले जाने को हुआ, सूरजसिंह ने उसे रोका और अपने ही घर रह जाने को कहा। उस दिन से लेकर करमसिंह सूरजसिंह के हर आदेश का पालन करते हुए पढ़ने-लिखने भी लगा। सूरजसिंह ने यह कहकर उसे अपने गाँव के शिक्षक के पास करमसिंह को छोड़ दिया कि बिना पढ़े-लिखे आदमी किसी काम का नहीं होता।

कुछ ही दिनों में करमसिंह बड़ा योग्य निकला। उसने शिक्षा प्राप्त की, साथ ही काम-काज भी सीख गया। एक दिन उसने सूरजसिंह से कहा कि अब वह अपना पेट आप पाल सकता है। दूसरों की दया पर उसे निर्भर रहने की जरूरत नहीं है।

फिर क्या था, सूरजसिंह ने पड़ोसी गाँव से दुर्गादत्त को बुला भेजा। दुर्गादत्त ने प्रवेश करते ही कहा–"सूरजसिंह! आज तक तुमने मेरे पुत्र को अपने घर क़ैदी बनाकर रखा। इसके वास्ते मैं तुम्हारे पुत्र करमसिंह को दण्ड देने जा रहा हूँ।"

"कैसा दण्ड दोगे?" सूरजसिंह ने पूछा।

"मैं अपनी नटखट लड़की के साथ तुम्हारे करमसिंह की शादी करूँगा। क्यों, तुम्हें मंजूर है सूरजसिंह?" दुर्गादत्त ने पूछा।

उनकी बातें सुनने पर करमसिंह को असली नाटक का पता चल गया। उसका वास्तविक नाम करमसिंह और उसके पिता का नाम सूरजसिंह ही है। बूढ़े के साथ जो लड़का आया था, वह दुर्गादत्त का पुत्र है। उसे एक योग्य व्यक्ति बनाने के ख्याल से इन लोगों ने यह नाटक रचा था।

करमसिंह अपने पिता के चरणों पर गिर कर बोला–"बाबूजी! मुझे मफ़ कर दो। मुझे अपने से कभी दूर न करो।"

अमीरी-गरीबी

एक गाँव में धनगुप्त नामक एक व्यापारी था। उसने ज़िंदगी भर कमाकर अपार संपत्ति जोड़ ली। बुढ़ापे में लकवा मार गया तो उसने खाट पकड़ ली, तब वह पछताने लगा–"मेरी सारी ज़िंदगी केवल धन जोड़ने में ही व्यतीत हो गई है। मैं अपनी कमाई के द्वारा लोगों के काम में आनेवाला कोई उपकार नहीं कर पाया।"

यों सोचकर उसने अपने पुत्र श्रीगुप्त को निकट बुलाकर समझाया–"बेटा, मैं अपनी ज़िंदगी में जनता के उपयोग का एक भी काम कर न पाया। तुम अपनी जरूरतों के लिए आवश्यक धन रखकर बचे हुए धन से एक धर्मशाला बनवा दो।" यों कहकर धनगुप्त ने अपनी आँखें मूंद लीं।

अपने पिता की अंत्येष्ठि क्रियाएँ समाप्त करने के बाद श्रीगुप्त व्यापार में निमग्न हो गया। उस वर्ष उसे आशा से अधिक लाभ हुआ। उसे अपने पिता की बातें याद आ गईं।

श्रीगुप्त ने सोचा–"हो सकता है कि व्यापार में अगले साल नुक़सान हो जाय! अगले वर्ष भी ज्यादा फ़ायदा हो तो मैं धर्मशाला बनवा दूँगा; वरना बेकार यह धन खर्च क्यों करूँ।"

दूसरे साल भी उसे दुगुना लाभ हुआ। फिर भी उसे उस धन से संतोष नहीं हुआ। उसने धर्मशाला बनाने की बात फिर टाल दी।

एक दिन रात को श्रीगुप्त बड़ी देर तक अपनी हिसाब-किताब देखते जागता रहा। उस समय कोई पीड़ा के मारे कराहते हुए आकर उसके घर के सामने के चबूतरे पर बैठा। श्रीगुप्त ने खिड़की में से झांककर बाहर देखा। एक बूढ़ा, पर

सुधीर चौहान

अंधा भिखारी पीड़ा के मारे कराहते हुए चबूतरे पर बैठे अपनी झोली और बरतन को टटोल रहा था।

इतने में एक और भिखारी लंगड़ाते हुए चबूतरे के पास आया और पूछा— "जगत, कराहते क्यों हो? क्या हुआ तुम्हें?"

जगत ने पीड़ा के मारे कहा—"अरे, नारायण, तुम हो? मैं तो अंधा ठहरा! सुबह भीख माँगने निकला तो पैर में कील गड़ गया। कील तो निकाला, पर पैर सूझ गया है। इसलिए मैं कहीं जा न सका। आज मुट्ठी भर दाने भी हाथ न लगे। एक ओर पैर दुख रहा है तो दूसरी ओर भूख सता रही है। मैं अपनी हालत क्या बताऊँ?"

नारायण ने जगत के पैर की ओर देखा। वह खूब फूल चुका था। नरायण ने अपनी झोली में से बर्तन निकालते हुए कहा—"मैं तुम्हारे पैर की पीड़ा को तो दूर नहीं कर सकता। लेकिन पहले खाना तो खा लो।" यों कहते नारायण ने अंधे की ओर बर्तन बढ़ाया।

"तुमने भी कुछ खाया या पूरा खाना मुझको ही दे रहे हो?" जगत ने आश्चर्य में आकर पूछा।

"दोनों में बराबर बांट लिया है। मैंने अपना हिस्सा तुम्हारे बर्तन में ले लिया है।" नारायण ने दो मुट्ठी बूढ़े के बर्तन में डालते हुए जवाब दिया।

इस दृश्य को खिड़की में से देखनेवाले श्रीगुप्त की आँखें खुल गईं। अपने पास जो कुछ है, उसे बाँटकर देनेवाली संपत्ति नारायण की असली अमीरी है। पर किसी को भी कुछ न दे सकनेवाली उसकी स्थिति गरीबी की है।

इसके बाद श्रीगुप्त ने उस रात को उन दोनों भिखारियों को अपने घर में भर पेट खाना खिलाकर आश्रय दिया। दूसरे दिन सवेरे जगत के पैर का इलाज करवाया और उसी दिन धर्मशाला बनाने का काम शुरू किया।

राक्षस नारियों की बातें सुनने पर रावण का क्रोध भड़क उठा। उसने पराक्रमी तथा शक्तिशाली राक्षसों को बुलाकर हनुमान को बन्दी बनाने का आदेश दिया। राक्षस हथियार लेकर हनुमान को बन्दी बनाने के लिए निकल पड़े। उन्हें अशोकवन के द्वार पर ही हनुमान दिखाई दिया। फिर क्या था, सबने कोलाहल करते हुए हनुमान को घेर लिया। इस पर महाकाय हनुमान ने अपनी पूंछ जमीन पर दे मारी, ज़ोर से गर्जन करके अपने कंधे ठोंक दिये। उसकी ध्वनि सारी लंका में गूंज उठी।

इसके बाद हनुमान यों गरज उठा– "राम और लक्ष्मण की विजय हो! वानर-राजा सुग्रीव की विजय हो! मैं कोसल नरेश राम का सेवक हूँ! शत्रु-संहारक हूं! वायुपुत्र हनुमान हूं! मैं वृक्षों तथा शिलाओं को अपने आयुध बनाकर उनके साथ युद्ध करते एक हज़ार रावणों का सामना कर सकता हूं! राक्षसों के देखते लंका नगर को ध्वस्त करूंगा! मटियामेट कर डालूंगा। सीताजी को प्रणाम करके श्री रामचन्द्र के पास लौट जाऊँगा।"

हनुमान का गर्जन सुनकर राक्षस डर गये। फिर भी हिम्मत बटोर कर अपने राजा के आदेशानुसार हनुमान के साथ युद्ध करने का निश्चय करके उस पर अपने हथियारों का प्रयोग करने लगे। हनुमान ने द्वार के समीप में स्थित लोहे का गदा

१५. राक्षसों के साथ युद्ध
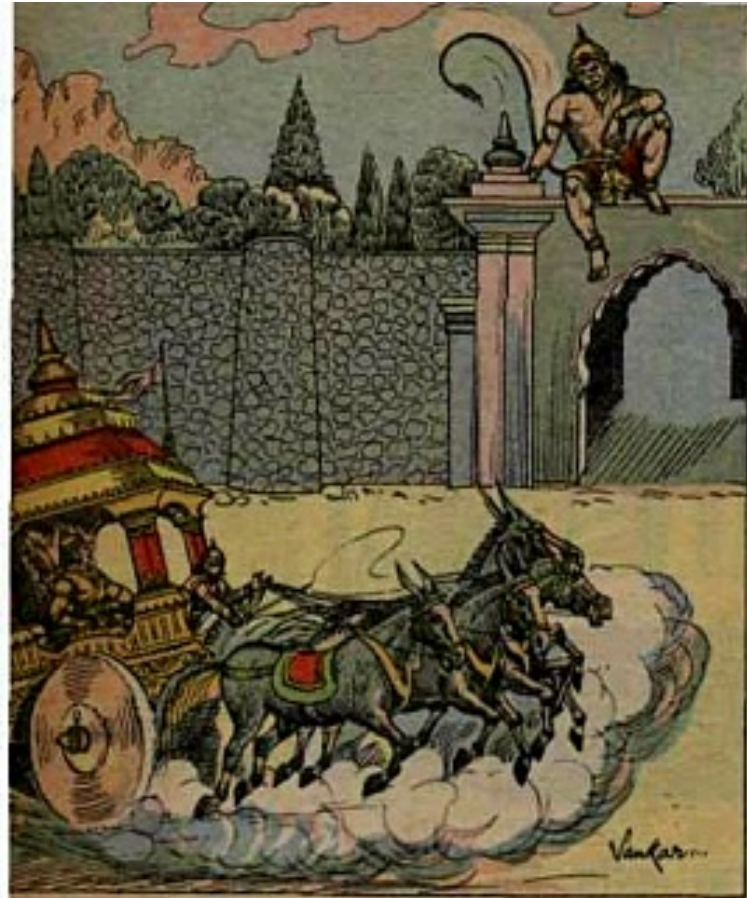
लेकर राक्षसों का संहार करना शुरू किया, सबको मारने के बाद वह पुनः द्वार के पास आकर खड़ा हो गया। जो राक्षस भाग गये, उन लोगों ने जाकर रावण से बताया कि उसके सारे सैनिक हनुमान के हाथों में मारे गये हैं।

रावण का क्रोध भभक उठा। इस बार उसने हनुमान के साथ लड़ने के लिए वीर प्रहस्त के पुत्र को भेजा।

इस बीच हनुमान की दृष्टि चैत्य प्रासाद पर पड़ी। उसके मन में ख्याल आया कि क्यों न इस भवन को ध्वस्त न किया जाय। एक ही छलांग में वह उस महल पर कूद पड़ा। उसका सर्वनाश करके सिंहनाद कर उठा। इतने में चैत्य प्रासाद के रक्षक अस्त्र-शस्त्रों के साथ हनुमान पर हमला कर बैठे। हनुमान ने एक स्तम्भ को उखाड़ डाला, उसे जोर से घुमा-घुमा कर एक साथ सौ राक्षसों का वध किया।

इस बीच प्रहस्त का पुत्र जंबुमाली धनुष और बाण लेकर गधों से जुते रथ पर सवार हो हनुमान पर आक्रमण कर बैठा। उसे देखते ही उत्साह में आकर हनुमान पुनः सिंहनाद कर उठा।

हनुमान पर जंबुमाली ने बाणों का प्रयोग किया। वे बाण हनुमान के सिर, चेहरे तथा हाथों पर जा लगे, रक्त बहने के कारण हनुमान का चेहरा और लाल हो उठा। इस पर रुष्ट हो हनुमान ने एक बड़ी शिला उठाई और जंबुमाली पर जोर से फेंक दिया। जंबुमाली ने उस शिला पर बाणों का प्रहार किया। इसी प्रकार हनुमान के द्वारा फेंके गये सालवृक्ष को भी जंबुमाली ने अपने बाणों से काट डाला, तब हनुमान पर बाणों की वर्षा की। हनुमान कुपित हो गदा लेकर आगे बढ़ा और जंबुमाली पर फेंक दिया। इससे जंबुमाली, उसका रथ और गधे भी चूर-चूर हो गये।

जंबुमाली की मृत्यु का समाचार मिलते ही क्रोध के मारे रावण का माथा ठनक

उठा। उसने अपने मंत्री के सात पुत्रों को जो अग्निहोत्र जैसे तेज वाले थे, सेना सहित हनुमान को बन्दी बनाने के लिए भेज दिया। वे लोग हनुमान का वध करने की होड़ लगा कर घोड़ों से जुते रथों पर सवार हो निकल पड़े।

वे लोग अशोकवन के द्वार तक पहुँचते ही हनुमान पर बाणों की वर्षा करने लगे। हनुमान उन बाणों से बचने के लिए उनके निशानों से-परे हो आसमान में इधर-उधर उछलता रहा। उसका गर्जन सुनकर राक्षस भयभीत हो उठे। मौक़ा पाकर हनुमान ने उग्र रूप धारण कर राक्षस वीरों को लात मारा, मुक्के मारे और नखों से चीर डाला। इस युद्ध में अनेक राक्षस काम आये; बाक़ी लोग जान बचाकर भाग गये।

हनुमान पुनः द्वार के पास लौट आया, उसके मन में युद्ध करने का उत्साह उमड़ रहा था।

मंत्री-पुत्रों के भी युद्ध में मरने का समाचार सुनकर रावण सहम गया। मगर उसने अपने भय को प्रकट होने नहीं दिया। तब अपने सेनापतियों में विरूपाक्ष, यूपाक्ष, दुर्धर, प्रघस तथा भाव कर्ण नामक पाँच वीरों को संबोधित कर रावण ने यों चेतावनी दी: "तुम लोग रथ तथा हाथियों को ले जाकर उस वानर को दण्ड दो। वह देखने में बड़ा ही बलवान मालूम होता है। उसके मामले में तुम

हथियारों के साथ तुमुल ध्वनि करते हनुमान पर आक्रमण करने निकल पड़े। उन वीरों ने हनुमान को घेर कर उस पर अनेक आयुधों का प्रयोग किया। उनके थोड़े से बाण हनुमान के सिर पर जा लगें। इस पर नाराज हो हनुमान सिंहनाद करते आसमान में उड़ चला। तब दुर्धर ने आसमान में सैकड़ों बाण फेंके। हनुमान बाणों से अपने को बचाते अपने शरीर का विस्तार करके बिजली की भांति वेग से दुर्धर के रथ पर कूद पड़ा। इस आघात से दुर्धर के रथ के आठ घोड़ों के साथ वह भी ठण्डा हो गया।

इसके उपरांत हनुमान ने एक साल वृक्ष को उखाड़ कर विरूपाक्ष और यूपाक्ष पर प्रहार किया, इस प्रकार उन्हें भी मार डाला। इन वीरों के धराशायी होते ही प्रघस और भावकर्ण ने हनुमान के साथ युद्ध किया, इस बार हनुमान ने एक पहाड़ी शिखर को उखाड़ कर उन दोनों वीरों तथा उनकी सेना को भी मार डाला।

फिर यथाप्रकार वह द्वार के निकट आकर खड़ा हो गया।

पाँचों सेनापतियों की मृत्यु का समाचार मिलते ही रावण ने अपने पुत्र अक्ष को युद्ध करने भेजा। अक्ष युद्ध के प्रति अमित उत्साह रखने वाला वीर था।

लोग जरा भी असावधान मत रहो। मुझे ऐसा तो नहीं लगता कि वह कोई जानवर है और न मानव ही। वह तो महान बलवान भूत जैसा लगता है। शायद इंद्र ने हमारा संहार करने के हेतु इस भूत की सृष्टि करके भेज दिया हो! मैं वाली, सुग्रीव, जांबवान, नील, द्विविद इत्यादि को पहले से ही जानता हूँ। उन में शायद ऐसी शक्ति किसी में नहीं है। तुम लोग अपनी सारी शक्ति लगा कर हनुमान को बन्दी बना लाओ। अपनी आत्मरक्षा में असावधान न रहो।"

अपने राजा का आदेश मानकर पाँचों सेनापति रथ, हाथी, घोड़े तथा विभिन्न

अपने पिता का संकेत मिलते ही अक्ष उठ खड़ा हो गया। एक स्वर्ण रथ पर सवार हो शीघ्र गति से अशोकवन के समीप पहुँचा। आठ घोड़ों से जुता अक्ष का रथ ज़मीन का स्पर्श किये बिना ही चल सकता था। वह रथ सदा अस्त्र-शस्त्र से भरा रहता था।

अक्ष ने हनुमान को देखते ही भांप लिया कि वह एक असाधारण वीर है। इसलिए उसने भारी पैमाने पर युद्ध की तैयारी की। दोनों के बीच भयंकर युद्ध हुआ। अक्ष के विविध बाणों के आघात से हनुमान का पौरुष दुगुना हो उठा। वह आकाश में उड़ा। इस पर अक्ष अपने रथ के साथ आसमान में उड़ कर हनुमान पर बाणों का-प्रहार करने लगा। हनुमान बाणों के वार से बचते आसमान में संचार करते हुए अक्षकुमार का वध करने का उपाय सोचने लगा। छोटी सी अवस्था में असाधारण पराक्रम का परिचय देनेवाले अक्ष का वध न करे तो भविष्य में जाकर वह सब को सतायेगा। यह सोचकर हनुमान ने युक्ति के साथ अचानक अक्ष के पैर पकड़कर ज़ोर से चक्राकार में घुमाया और उसे ज़मीन पर दे मारा।

इस आघात से अक्ष ने उसी वक़्त दम तोड़ दिया।

अक्ष की मृत्यु का समाचार मिलते ही रावण का क्रोध और दुख भी एक साथ उमड़ पड़ा। फिर भी अपने दुख पर नियंत्रण करते हुए वह अपने दूसरे पुत्र मेघनाथ को देख बोला–"बेटा, इस वानर ने अब तक असख्य सेना, जंबुमाली, मंत्री के पुत्र पांचों सेनापतियों तथा तुम्हारे भाई अक्ष का भी वध कर डाला है। इसलिए तुम उसकी शक्ति का ठीक से अन्दाज़ा लगा कर तब युद्ध करो। तुम युद्ध करने में मेरी समता रखते हो। देवताओं को पराजित करने की क्षमता रखनेवाले हो तुम। तुमने कई बार देवताओं को हराया भी है। हां! तुम अपने साथ सेना मत ले जाओ।

तुम केवल अपने अस्त्रों पर ही भरोसा रखो। मैं इस ख्याल से तुम्हें हनुमान के साथ युद्ध करने भेज रहा हूँ कि तुम बड़ी सरलता के साथ अपनी रक्षा कर सकते हो और उसे निश्चय ही पराजित कर सकते हो!"

यह आदेश पाकर मेघमाथ ने अपने पिता रावण की श्रद्धापूर्वक प्रदक्षिणा की, तब युद्ध करने चल पड़ा। वह रथ पर जाकर शीघ्र ही हनुमान के निकट अशोकवन में पहुँचा। मेघनाथ को युद्ध करने आते देख हनुमान सिंहनाद कर उठा। मेघनाथ ने ज्यों ही बाणों का प्रहार किया, त्यों ही हनुमान आकाश में उड़ कर उन बाणों के निशानों से अपने को बचाते हुए संचार करने लगा। अपना एक भी बाण हनुमान को घायल न करते देख मेघनाथ चिढ़ गया। उसे भली भांति मालूम हो गया कि हनुमान का वध करना असंभव न हो तो कठिन ज़रूर है! इसलिए हनुमान को बन्दी बनाने के ख्याल से मेघनाथ ने अपने सबसे महत्वपूर्ण ब्रह्मास्त्र का संधान किया। इस पर हनुमान अनुशासित हो नीचे गिर पड़ा और असहाय बनकर पड़ा ही रह गया।

हनुमान ने भी स्वयं भांप लिया कि वह ब्रह्मास्त्र के द्वारा बन्दी बना है। उसने ब्रह्मा का यह वरदान स्मरण किया कि वह किसी भी प्रकार के अस्त्र का बन्दी न बनेगा। फिर भी उसने थोड़ी देर के लिए ब्रह्मास्त्र के बंधन में रहना चाहा। उसका यह भी विश्वास था कि ब्रह्मा, इंद्र तथा वायुदेव अवश्य उसकी रक्षा करेंगे, इसलिए उसे कोई ख़तरा उपस्थित न होगा। अलावा इसके बन्दी हो जाने पर उसे रावण के साथ बातचीत करने, उसके दरबार को देखने और उसकी ताक़त का अंदाज लगाने का भी मौक़ा मिलेगा।

हनुमान को निश्चल देख राक्षसों ने उनके निकट पहुँच कर रस्सों से उसे

बांध डाला। हनुमान के बन्दी होते ही ब्रह्मास्त्र ने अपने बंधन से उसे मुक्त कर दिया। अन्य बंधनो के रहते ब्रह्मास्त्र का बंधन ठहर नहीं पाता। मेघनाद यह बात जानता था, इसलिए अज्ञानी राक्षसों की इस करनी पर वह मन ही मन दुखी हुआ। मगर राक्षस जब हनुमान को अपने साथ ले जा रहे थे, तब भी उसे यह बात ज्ञात न थी कि ब्रह्मास्त्र उससे मुक्त हो गया है। इसके बाद राक्षस हनुमान को लाठियों से पीटते, मुक्के मारते, घसीटते हुए रावण के पास ले गये।

मेघनाथ ने हनुमान को रावण तथा अन्य दरबारियों को दिखा कर उसका परिचय कराया–"यही वह वानर है जिसने हमारे सबसे सुन्दर अशोकवन को उजाड़ ड़ाला और हमारे अनेक वीरों को मृत्यु के मुंह में भेज दिया है।" मत्त हाथी जैसे दिखनेवाले हनुमान को देख दरबारी सब आपस में प्रश्न करने लगे–"यह वानर कौन है? यह किसका दूत बनकर आया है? वास्तव में यहाँ पर क्यों आया है? किस काम से आया है? किससे मिलने आया है?"

रावण के दरबार में अपने को उपस्थित देख हनुमान ने एक बार रावण तथा अन्य राक्षसों पर अपनी दृष्टि दौड़ाई। रावण की आँखें क्रोध से भरी थीं। उसका आदेश पाकर रावण के मंत्रियों ने हनुमान से यों पूछा:

"तुम इधर क्यों आये हो? तुम्हें किसने भेजा है?"

"मैं वानर राजा सुग्रीव का दूत हूँ। उन्हीं के आदेश पर यहाँ आया हूँ।" हनुमान ने दृढ़ स्वर में उत्तर दिया।

इस पर रावण ने प्रहस्त को आदेश देते हुए कहा–"तुम उससे पूछो यह वानर यहाँ पर क्यों आया है? उसने अशोकवन को क्यों उजाड़ डाला है? राक्षस नारियों को क्यों डराया है? उसने युद्ध क्यों किया है? हमारे असंख्य वीरों तथा सैनिकों का वध क्यों किया है?"

धन्यास्ते पुरुषश्रेष्ठा ये बुद्धया कोप मुत्थितम्,
निरुन्दंति महात्मानो दीप्त मग्नि मिवाम्भसा ॥ १ ॥

[प्रज्वलित अग्नि को जिस प्रकार पानी से बुझाया जाता है, वैसे ही जो लोग अपने क्रोध पर बुद्धि के बल पर नियंत्रण करते हैं, वैसे पुरुषोत्तम व्यक्ति धन्य हैं।]

क्रुद्धम् पापम् न. कुर्यात्कः? क्रुद्धो हन्यादगुरू नपि,
क्रुद्धः परुषया वाचा नर स्साधू नधिक्षिपेत् ॥ २ ॥

[कौन ऐसा क्रोधी है जो पाप न करता हो? क्रोधी अपने गुरुओं का भी वध करता है, सज्जन पुरुषों की भी निंदा करता है।]

वाच्यावाच्यम् प्रकुपितो न विजानाति कर्हिचित्,
नाकार्य मस्ति क्रुद्धस्य, नावाच्यम् विद्यते क्वचित् ॥ ३ ॥

[क्रोधी यह नहीं जानता कि क्या कहना चाहिए और क्या नहीं कहना चाहिए। उसकी दृष्टि में ऐसी कोई बात या कार्य न होता जो न कही जाय और जो न किया जाय।]

य स्समुत्पतितम् क्रोधम् क्षमयैव निरस्यति,
यथोरगस्त्वचम् जीर्णाम् स वै पुरुष उच्यते ॥ ४ ॥

[जैसे साँप अपनी केंचुली को त्याग देता है, वैसे जो व्यक्ति अपने क्रोध पर सहनशीलता के साथ नियंत्रण करता है, वही सच्चा पुरुष है।]

Photo by A. L. Syed
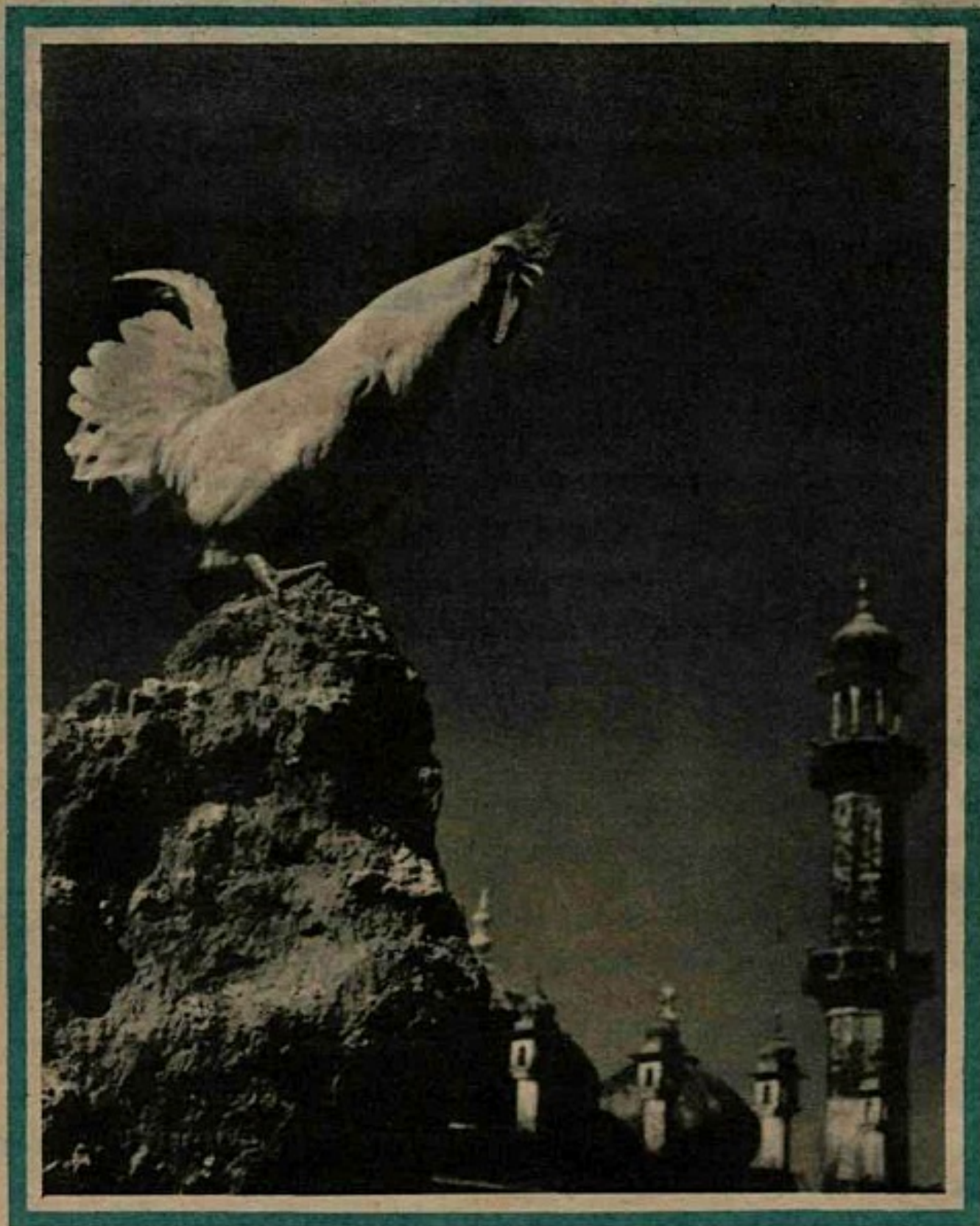
पुरस्कृत परिचयोक्ति

उठो, भोर हो आई !

प्रेषक : नरेश कुमार अरोरा

Photo by A. A. Syed
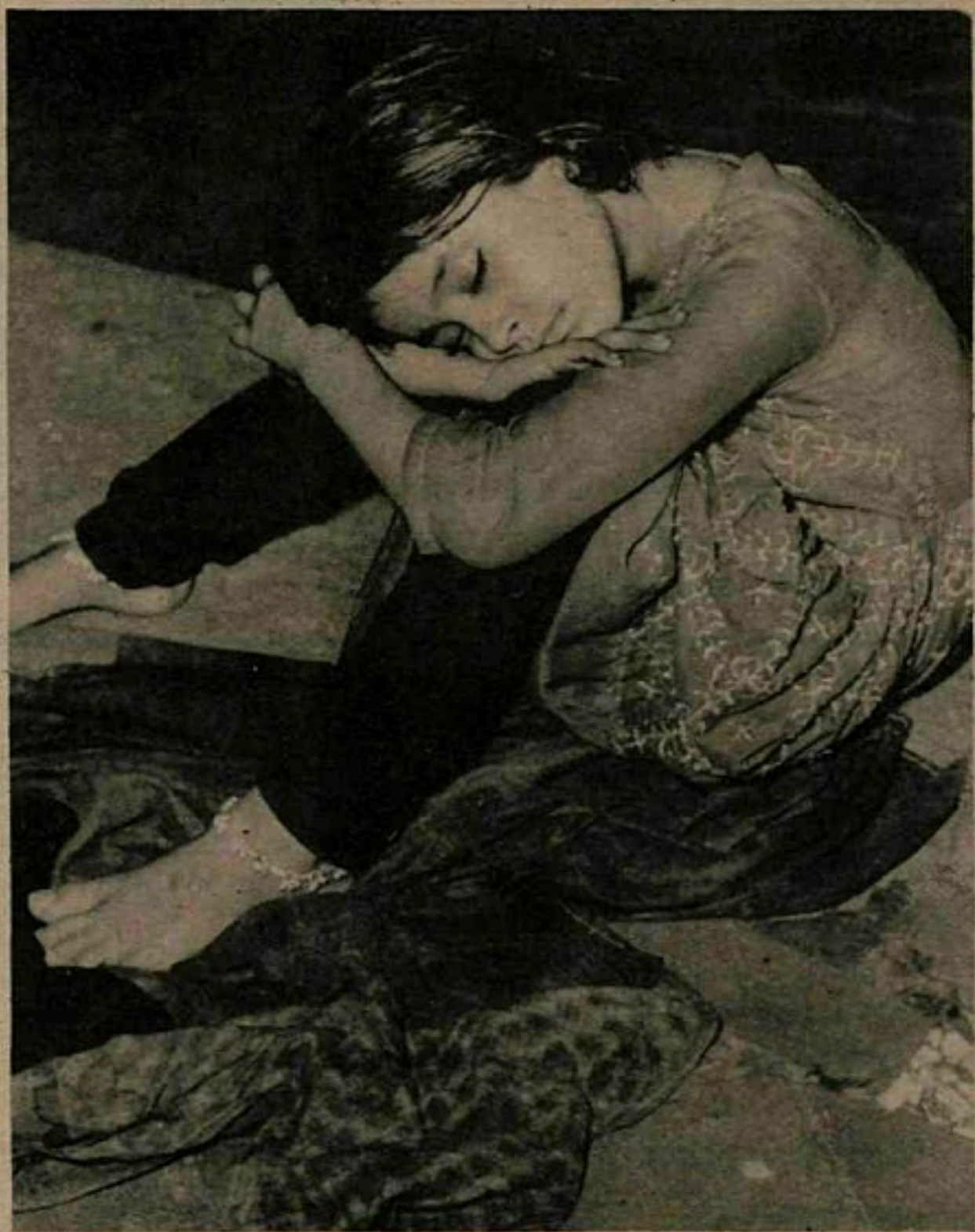
१५, ईदगाह
इलाहाबाद - २११००३

ठहरो, सोने दो भाई !!

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★ परिचयोक्तियाँ जनवरी १० तक प्राप्त होनी चाहिए। सिर्फ़ कार्ड पर ही लिख भेजें।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ मार्च के अंक में प्रकाशित की जायेंगी!

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor : NAGI REDDI

रु १०० जीतिए!

चन्दामामा के पाठकों के लिए एक नई पहेली!

झूठ

एक था राजा! उसे इस बात का घमण्ड था कि वह बहुत बड़ा बुद्धिमान है, इसलिए कोई भी व्यक्ति झूठ बोलकर उसे विश्वास दिला नहीं सकते। एक दिन भरी सभा में अपनी बुद्धिमत्ता प्रदर्शित करने की इच्छा राजा के मन में पैदा हुई।

राजा ने दरबारियों को संबोधित कर कहा–"जो व्यक्ति झूठ बोलकर मुझे विश्वास दिलाएगा, उसे मैं एक हज़ार स्वर्ण मुद्राऐं पुरस्कार में दूंगा।"

सभी दरबारी मौन रहें, तब एक ने उठकर कहा–"महाराज! मैं झूठ बोलकर आप को विश्वास दिला सकता हूँ।"

राजा ने झट कहा–"अच्छी बात है, कहो तो!"

"महाराज, और कहना ही क्या? मैं पुरस्कार जीत गया। मुझे एक हज़ार स्वर्ण मुद्राएं दिला दीजिए!" दरबारी ने कहा।

राजा चकित हो थोड़ी देर मौन रहा, तब उसे एक हज़ार स्वर्ण मुद्राऐं दे दीं।

प्रश्न : क्या दरबारी ने सचमुच झूठ बोलकर राजा को विश्वास दिलाया? वह कैसा झूठ है?

इस प्रश्न का सही उत्तर भेजनेवाले को १०० रुपयों का पुरस्कार दिया जाएगा। उत्तर समग्र तथा संक्षेप में हो! आप अपने उत्तर के साथ इसके साथ नत्थी की गई प्रश्नावली भी पूरा करके भेजिए! अन्यथा आप के उत्तरों पर विचार नहीं किया जाएगा। आप अपने उत्तर जनवरी २० के अन्दर निम्नलिखित पते पर भेजें।

'चन्दामामा' के पाठकों की प्रतियोगिता

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, मद्रास-६०००२६

कूपन

१. आप का नाम : पता : ____________________

____

२. आप की उम्र : ____________________

३. आप कितने भाई व बहनें हैं? : ____________________

४. आप के घर में चन्दामामा

कितने लोग पढ़ते हैं? : ____________________

५. उनकी उम्र क्या है? ____________________

६. क्या आप चन्दामामा दूसरों को भी उधार देते हैं? ____________________

७. कितने लोग आप के यहाँ से

उधार लेकर चन्दामामा पढ़ते हैं? : ____________________

८. आप के पिता का व्यवसाय क्या है? कैसी नौकरी करते हैं? : ____________________

____

९. आप का घर निजी है या किराये का? : ____________________

१०. आप के परिवार के लिए मोटरकार,

मोटार साइकिल वग़ैरह सवारियाँ हैं? : ____________________

११. चन्दामामा के साथ आप और

कौन कौन पत्रिकाएँ पढ़ते हैं? : ____________________

दस्तखत

लूटो जेम्स का मज़ा
पहचानो इन निशानों को
GEMS
Cadbury's MILK CHOCOLATE
नन्हें-मुन्नों का
मनपसंद
रंग-बिरंग
चॉकलेट
जेम्स
कॅडबरिज़
जेम्स - मज़े का मज़ा, स्फूर्ति की स्फूर्ति
C-5 HN

Photo by: DILIP BANERJE

DEPARTING

मित्र-भेद